

* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

कल्याण

मूल्य १० रुपये



वर्ष
९९

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
१२

संसार-वृक्ष



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



भगवान् श्रीद्वारकानाथजी

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



कल्याण

वन्दे वन्दनतुष्टमानसमतिप्रेमप्रियं प्रेमदं पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्यैकवासं शिवम्।
सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं विष्णुब्रह्मनुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शङ्करम् ॥

वर्ष
९१

गोरखपुर, सौर पौष, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, दिसम्बर २०१७ ई०

संख्या
१२

पूर्ण संख्या १०९३

श्रीद्वारकानाथजीकी वन्दना

शङ्खं प्रसारितसुखं स्वपदाश्रितानां चक्रं सदा दमितदानवदैत्यचक्रम्।
कौमोदकीं भुवनमोदकीं गदाग्र्यां पद्मालयाप्रियकरं प्रथितं च पद्मम्॥
संधारयन्तमतिचारुचतुर्भुजेषु श्रीवत्सकौस्तुभधरं वनमालयाढ्यम्।
सिन्धोस्तटे मुकुटकुण्डलमण्डितास्यं श्रीद्वारकेशमनिशं शरणं प्रपद्ये॥

जो अपने चरणाश्रित भक्तोंके लिये सुखका प्रसार करनेवाले शंखको, सदा दैत्यों और दानवोंके दलका दमन करनेवाले चक्रको, सम्पूर्ण भुवनोंको आनन्द प्रदान करनेवाली कौमोदकी नामक श्रेष्ठ गदाको तथा पद्मालया (लक्ष्मीस्वरूपा रुक्मिणी)-का प्रिय करनेवाले प्रख्यात पद्म-पुष्पको अपनी अत्यन्त मनोहर चार भुजाओंमें धारण किये रहते हैं, जिन्होंने अपने वक्षःस्थलपर श्रीवत्सका चिह्न तथा कौस्तुभ-मणि धारण कर रखी है, जो वनमालासे विभूषित हैं तथा जिनका मुखमण्डल किरीट और कुण्डलोंसे अलंकृत है; उन सिन्धु-तटवर्ती श्रीद्वारकानाथजीकी मैं निरन्तर शरण ग्रहण करता हूँ।

[पं० श्रीरामनारायणदत्तजी शास्त्री 'राम' कृत 'श्रीद्वारकेशाष्टक' से]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २,१५,०००)

कल्याण, सौर पौष, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, दिसम्बर २०१७ ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- श्रीद्वारकानाथजीकी वन्दना	३	१४- 'प्रणव' की उपासना	
२- कल्याण	५	(डॉ० श्री के० डी० शर्माजी)	२९
३- संसार-वृक्ष [आवरणचित्र-परिचय]	६	१५- श्रीभैरव एवं उनकी उपासना (पं० श्रीसुरेशचन्द्रजी ठाकुर) ...	३१
४- अर्थ और रहस्यका भेद		१६- श्रीकालभैरवाष्टकम्	३२
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	७	१७- मानसमें वर्णित उत्कृष्ट श्रीराम-प्रेमी	
५- क्या ईश्वर-साक्षात्कार भी एक वैज्ञानिक सत्य नहीं ?		(श्रीसुभाषचन्द्रजी बग्गा)	३३
(पं० श्रीधर्मदेवजी शास्त्री, दर्शनकेसरी, पंचतीर्थ)	११	१८- श्रीरामकृष्ण परमहंस [संत-चरित]	
६- विजय निश्चित है		(स्वामी श्रीअभेदानन्दजी महाराज)	३५
(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ...	३३	१९- मंगलमयी गोमाताकी सेवा परम कल्याणकारी है	
७- प्रसन्नता (पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल, एम०ए०, बी०टी०) ..	१६	(गोलोकवासी जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीराधा-	
८- मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई		सर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री 'श्रीजी' महाराज)	३७
(श्रीइन्दरचन्द्रजी तिवारी)	१८	२०- साधनोपयोगी पत्र	३८
९- साधकोंके प्रति—'हरि व्यापक सर्वत्र समान'		२१- व्रतोत्सव-पर्व [माघमासके व्रत-पर्व]	४०
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१९	२२- व्रतोत्सव-पर्व [फाल्गुनमासके व्रत-पर्व]	४१
१०- सुखासक्तको शान्ति कहाँ ? [कविता]		२३- कृपानुभूति	४२
(संत श्रीपथिकजी महाराज) [प्रेषक—श्रीकुँवरसिंहजी]	२०	२४- चरन-कमल बंदों हरि-राइ	४२
११- पगली माई [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र')	२१	२५- पढ़ो, समझो और करो	४३
१२- अनन्य शरणागति (श्रीराजेन्द्रप्रसादजी द्विवेदी)	२४	२६- मनन करने योग्य	४६
१३- 'रास रच्यो बन कुँवर-किसोरी'		२७- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक	
(डॉ० श्रीमती नीरूजी रस्तोगी)	२७	विषय-सूची	४७

चित्र-सूची

१- संसार-वृक्ष	(रंगीन) ... आवरण-पृष्ठ	५- वेणुवादन	(इकरंगा)	२७
२- भगवान् श्रीद्वारकानाथजी	(")	६- श्रीरामकी गोदमें जटायु	(")	३३
३- संसार-वृक्ष	(इकरंगा)	७- वासवदत्ताको धर्मोपदेश देते भिक्षु		
४- विभीषण-शरणागति	(")	उपगुप्त	(")	४६

सन् २०१८ के लिये शुल्क
एकवर्षीय ₹२५०
पंचवर्षीय ₹१२५०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥
जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

विदेशमें Air Mail } वार्षिक US\$ 50 (₹3000) { Us Cheque Collection
सजिल्द शुल्क } पंचवर्षीय US\$ 250 (₹15,000) { Charges 6\$ Extra

चालू वर्षका शुल्क
एकवर्षीय ₹२२०

संस्थापक — ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका
आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार
सम्पादक — राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक — डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

09235400242/244

सदस्यता-शुल्क — व्यवस्थापक — 'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस — २७३००५, गोरखपुर को भेजें।

Online सदस्यता-शुल्क — भुगतानहेतु-gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।
अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

कल्याण

याद रखो—भगवान् अकारण सुहृद् हैं और परम करुणामय हैं; वे यह नहीं सोचते कि जीव सब दोषोंसे रहित होकर, परम विशुद्ध होकर मेरी शरणमें आयेगा, तभी उसे आश्रय मिलेगा। वे देखते हैं, केवल एक बात—जीव मुझको ही अनन्य गति समझकर मेरी शरणमें आना चाहता है या नहीं। यदि सचमुच चाहता है तो वह फिर चाहे जैसा भी पापी-तापी, दुराचारी-दुःखभारी, पतित-पीड़ित हो, भगवान् उसे अपना अभय आश्रय देते ही हैं।

याद रखो—भगवान्का दरबार सबके लिये सदा खुला रहता है, जो भी वहाँ जाना चाहता है, सचमुच जाना चाहता है—उसीको जाने दिया जाता है और एक बार वहाँ पहुँच गया कि फिर उसके पाप-ताप, दुराचार-दुःख, पतन-पीड़ा सदाके लिये समूल नष्ट हो जाते हैं।

याद रखो—भगवान्के समान तुम्हारा अपना, सदा साथ देनेवाला आत्मीय, कभी किसी भी स्थितिमें घृणा न करनेवाला स्वामी और मित्र दूसरा कोई न है, न कभी हुआ है और न होगा। जिसको जगत्में कहीं भी स्थान नहीं मिलता, जो जगत्की दृष्टिमें सर्वथा नगण्य, तुच्छ, उपेक्षित और घृणित है, जिसको कहीं कोई भी अपना कहनेवाला तो है ही नहीं, दयाकी प्रेरणासे भी जिसकी ओर सुदृष्टिसे ताकनेवाला कोई नहीं है, उसको भी भगवान् उतना ही प्यार करते हैं, जितना किसी भी दूसरेको।

याद रखो—तुम कितना ही अपराध करो, कितना ही धोखा दो, कितना ही उनका तिरस्कार

और अपमान करो; भगवान्के सहज प्यारमें कभी कोई अन्तर नहीं पड़ता। तुम्ही जबतक मुख मोड़े रहोगे, तबतक उनके मधुर मुसकानभरे स्नेहपूर्ण वदनारविन्दकी झाँकीसे वंचित रहोगे, उनके स्नेह-सुधा-सागरमें अवगाहनका सौभाग्य नहीं पा सकोगे। इसमें चाहे कितना ही समय बीते; पर याद रखो—जिस क्षण तुमने उनकी ओर मुख मोड़ा, तुम देखोगे कि तुम्हारे किसी अपराधका, किसी धोखेका और तुम्हारे द्वारा किये हुए किसी तिरस्कार या अपमानका उन्हें मानो स्मरण ही नहीं है। जैसे स्नेहमयी जननीका वक्षःस्थल शिशुके लिये सदा ही खुला रहता है, वैसे ही वे तुम्हें बड़े प्यारसे अपने हृदयसे चिपटानेको तैयार मिलेंगे।

याद रखो—इतनेपर भी जो जीव उनकी ओरसे मुख मोड़े रहनेमें ही अपना गौरव मानता है, उसके समान अभागा और कोई नहीं है। सारे पाप-ताप सदा उसके लिये मुँह बाये खड़े रहते हैं और वह अपने जीवनमें किसी भी स्थितिमें कभी भी सच्ची सुख-शान्तिका साक्षात्कार नहीं कर सकता।

याद रखो—मनुष्य जगत्में विषयोंकी दृष्टिसे चाहे जितना सौभाग्यवान् समझा जाय और जगत्में उसकी मान-प्रतिष्ठा तथा प्रशंसा-कीर्तिके चाहे जितने पुल बाँधे जायँ, असलमें वह बड़ा ही भाग्यहीन और निष्फल-जीवन है। मानव-जीवनकी सफलता भोगोंकी अधिकतामें नहीं है, वह तो प्रभुकी शरणागतिमें ही है।

सुनहु उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं बिषय अनुरागी॥

‘शिव’

संसार-वृक्ष



श्रीरामावतारमें भगवान् श्रीरामके राज्याभिषेकके समय सब देवताओंद्वारा स्तुति करके अपने-अपने धाम चले जानेपर चारों वेद बन्दीजनोंके वेशमें आकर परब्रह्म परमात्मा श्रीरामकी स्तुति करते हुए कहते हैं कि हे प्रभु! आप ही इस संसाररूपी वृक्षके रूपमें प्रकट हैं—

अव्यक्तमूलमनादि तरु त्वच्च चारि निगमागम भने ।
 षट् कंथ साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने ॥
 फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे ।
 पल्लवत फलत नवल नित संसार बिटप नमामहे ॥

वेदशास्त्रोंने कहा—जिसका मूल अव्यक्त (प्रकृति) है; जो प्रवाहरूपसे अनादि है; इसकी चार त्वचाएँ, छः तने, पच्चीस शाखाएँ, अनेकों पत्ते और बहुत-से फूल हैं, जिसमें कड़वे और मीठे दो प्रकारके फल लगे हैं; जिसपर एक ही बेल है, जो उसीके आश्रित रहती है; जिसमें नित्य नये पत्ते और फूल निकलते रहते हैं; ऐसे संसारवृक्ष-स्वरूप (विश्वरूपमें प्रकट) आपको हम नमस्कार करते हैं।

इस संसार-वृक्षके विषयमें गीतामें भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं-

उर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।

छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥

अर्थात् आदिपुरुष परमेश्वररूप मूलवाले और ब्रह्मारूप मुख्य शाखावाले जिस संसाररूप पीपलके वृक्षको अविनाशी कहते हैं तथा वेद जिसके पत्ते कहे गये हैं—उस संसाररूप वृक्षको जो पुरुष मूलसहित तत्त्वसे जानता है, वह वेदके तात्पर्यको जाननेवाला है।

यह संसार अश्वत्थ—पीपल वृक्षके समान है। अश्वत्थ भगवान्की विभूति है, अतः प्रणम्य है। संसार भी 'वासुदेवः सर्वम्' के भावसे प्रणम्य है। परंतु अश्वत्थका एक तात्पर्य 'चल-दल' भी है अर्थात् उसके पत्ते एक क्षण भी स्थिर नहीं रहते, उसी प्रकार संसार भी अनित्य और नाशवान् है। यह संसार-वृक्ष बड़ा विचित्र है, इसका मूल ऊपर तथा शाखाएँ नीचेकी ओर हैं। वस्तुतः इस संसार-वृक्षकी उत्पत्ति और इसका विस्तार आदिपुरुष नारायणसे हुआ है, जो सर्वव्यापक होते हुए भी सगुणरूपसे सबसे ऊपर नित्यधाममें निवास करते हैं। संसार-वृक्षकी उत्पत्तिके ही समय ब्रह्माका उद्भव होता है, इस कारण ब्रह्मा ही इसकी प्रधान शाखा हैं। ब्रह्माका लोक आदिपुरुष नारायणके नित्यधामकी अपेक्षा नीचे है, इसलिये इस संसार-वृक्षको नीचेकी ओर शाखावाला कहा गया है। यह संसार-वृक्ष परिवर्तनशील होनेसे नाशवान् है, परंतु इसका प्रवाह नारायणसे है, अतः यह अनादि और अव्यय भी है। वेद इस संसार-वृक्षके पत्ते हैं, जो ब्रह्माजीरूपी मुख्य शाखासे प्रकट हैं। जिस प्रकार पत्ते वृक्षकी रक्षा और वृद्धि करनेवाले होते हैं, वैसे ही वेद-विहित कर्मोंसे संसारकी वृद्धि और रक्षा होती है, सर्वशक्तिमान् परमेश्वरकी मायासे उत्पन्न यह संसार भी वृक्षकी भाँति उत्पत्ति-विनाशशील और क्षणिक है, अतएव इसकी चमक-दमकमें न फँसकर इसको उत्पन्न करनेवाले मायापति परमेश्वरकी शरणमें जाना चाहिये; क्योंकि भगवान्की शरणमें जाना ही सम्पूर्ण वेदोंका

अर्थ और रहस्यका भेद

[श्रीमद्भगवद्गीताके एक श्लोकका रहस्य]

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

एक बहुत ही सन्तोषी, सदाचारी और विद्वान् ब्राह्मण थे, किंतु थे वे निर्धन। उनकी पत्नी बड़ी पतिव्रता, विदुषी, तत्त्वज्ञानसे सम्पन्न और जीवन्मुक्त थी। उस देशके राजा भी तत्त्वज्ञानी, जीवन्मुक्त महात्मा थे। ब्राह्मणपत्नीने एक दिन विचार किया—मेरे पतिदेव सन्तोषी, सदाचारी और विद्वान् हैं, इसलिये वे मुक्तिके अधिकारी तो हैं ही, इनकी यदि हमारे जीवन्मुक्त राजासे भेंट हो जाय तो ये भी शीघ्र तत्त्वज्ञानी—जीवन्मुक्त हो सकते हैं। यह सोचकर उसने पतिसे प्रार्थना की—‘पतिदेव! आजकल अपने शरीरनिर्वाहके लिये बड़ी ही तंगी हो गयी है और आयका कोई भी रास्ता नहीं दीखता। सुना जाता है, यहाँके राजा बड़े सदाचारी, जीवन्मुक्त महात्मा हैं तथा ब्राह्मणोंका आदर-सत्कार करनेवाले एवं परम उदार हैं, आप उनसे एक बार मिल लें तो वे आपका उचित सत्कार कर सकते हैं और शास्त्रविधिके अनुसार यदि राजा बिना याचना किये ही कुछ दे तो वह ब्राह्मणके लिये अमृतके समान है। यह आप जानते ही हैं।’

पण्डितजीने कहा—‘तुम्हारा कहना ठीक है; परंतु मैं जबतक किसीका कोई उपकार न कर दूँ, तबतक अयाचक वृत्तिसे भी—बिना माँगे उससे दान लेकर जीवन-निर्वाह करना निन्दास्पद समझता हूँ; अतएव मैं ऐसा नहीं करूँगा, चाहे मुझे भूखों ही रहना पड़े।’

ब्राह्मणपत्नी बोली—‘आप विद्वान् हैं, राजाको यथोचित उपदेश देकर उनका उपकार कर सकते हैं।’ यह बात पण्डितजीको कुछ रुची, पर उनका मन राजाके पास जानेका नहीं होता था। अन्तमें पत्नीके बहुत कहनेपर वे राजी हो गये और राजसभामें चले गये। पण्डितजीके सद्गुण और सदाचरणोंकी ख्याति देशभरमें फैली हुई थी। राजाने पण्डितजीका बड़ा आदर-सत्कार किया। कुशलक्षेम-प्रश्नोत्तरके अनन्तर राजाने बहुत-सी स्वर्णमुद्राएँ मँगाकर पण्डितजीको भेंट कीं। पण्डितजीने

अस्वीकार करते हुए कहा—‘राजन्! आप बड़े उदार हैं, यह मैं जानता हूँ। परंतु मेरा एक नियम है, मैं किसीका उपकार किये बिना उससे अयाचितरूपमें भी धन नहीं लेता। आप मुझे कोई काम सौंपें और उससे मैं आपका सन्तोष करा सकूँ, तो उसके बाद आप यदि कुछ दें तो वह लिया जा सकता है।’ राजाने कहा—‘पण्डितजी! बहुत अच्छा। आप सदाचारी विद्वान् ब्राह्मण हैं। मैं आपसे गीताका रहस्य सुनना चाहता हूँ। मुझे आप कृपापूर्वक गीताके बारहवें अध्यायके सोलहवें श्लोकका भावसहित स्पष्ट अर्थ समझाइये।’

पण्डितजीने पहले श्लोक पढ़ा, फिर उसका शब्दार्थ बतलाया—

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।

सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥

‘जो पुरुष आकांक्षासे रहित, बाहर-भीतरसे शुद्ध, चतुर, पक्षपातसे रहित और दुःखोंसे छूटा हुआ है, वह सब आरम्भोंका त्यागी मेरा भक्त मुझको प्रिय है।’

तदनन्तर वे श्लोकका भावार्थ इस प्रकार बतलाने लगे—

जिसे किसी भी प्रकारकी इच्छा, स्पृहा और कामना न हो, जो आप्तकाम हो एवं जिसे किसी बातकी भी परवा न हो, उसे ‘अनपेक्ष’ कहते हैं।

जिसका अन्तःकरण अत्यन्त पवित्र हो, जिसका बाहरका व्यवहार भी उद्वेगरहित, पवित्र और न्याययुक्त हो; जिसके दर्शन, भाषण, स्पर्श और वार्तालापसे ही लोग पवित्र हो जायँ, वह ‘शुचि’ है।

जिस महान् कार्यके लिये मनुष्य-शरीर मिला है, उसे प्राप्त कर लेना अर्थात् भगवान्को प्राप्त कर लेना ही मनुष्यकी यथार्थ ‘दक्षता’ है; जो अपना काम बना लेता है, वही ‘दक्ष’ कहलाता है।

जो गवाही देते समय और न्याय या पंचायत करते समय कुटुम्बी, मित्र, बन्धु, आदिकी दृष्टिसे या राग, द्वेष,

राजाके बहुत अनुनय-विनय करनेपर भी पण्डितजीने

भेंट स्वीकार नहीं की और वे घर लौट आये। उधर राजाने एक विश्वासपात्र गुप्तचरको बुलाकर कहा—‘ये ब्राह्मणदेवता बड़े त्यागी, सदाचारी और स्वाभिमानी विद्वान् हैं। तुम इनके पीछे जाकर देखो, घरपर इनका कैसा-क्या व्यवहार और वार्तालाप होता है और फिर उसकी सूचना मुझे दो।’ राजाका आदेश पाकर गुप्तचर उनके पीछे हो लिया और उनका सब व्यवहार-वार्तालाप देखता रहा।

पण्डितजीने घर लौटकर पत्नीके पूछनेपर राजसभाकी सारी कथा आद्योपान्त उसे सुना दी। पत्नीने विनय और प्रेमसे कहा—‘स्वामिन्! राजाने जो कुछ कहा वह तो उचित ही मालूम होता है। आपको नाराज नहीं होना चाहिये था।’

पण्डितजी—(कुछ क्रोधावेशमें आकर तथा व्यथित-से होकर) वाह! तुम भी राजाकी ही बातका समर्थन करती हो!

पत्नी—नाथ! आप ही तो कहा करते हैं कि न्याययुक्त बातका समर्थन करना चाहिये।

पण्डितजी—(कुछ और भी उतेजनासे, परंतु उसे दबाते हुए) क्या राजाका यह कहना न्याययुक्त है कि मेरी व्याख्या तो सुन्दर है, पर मैं इसके रहस्यको नहीं समझता ?

पत्नी—नाथ! आप क्षमा करें। राजाकी बात तो बहुत ठीक है। किसी श्लोककी व्याख्या करना सहज है, पर उसका यथार्थ रहस्य जानना बहुत ही दुर्लभ है।

पण्डितजी—कैसे ?

पत्नी—जैसे ग्रामोफोनपर जो चूड़ी चढ़ा दी जाती है, वह वही गाना गा देता है, पर उसके रहस्यको वह थोड़े ही समझता है।

पण्डितजी—तो क्या मैं ग्रामोफोनकी तरह हूँ?

पत्नी—जो पुरुष दूसरोंको उपदेश-आदेश तो बड़ा सुन्दर करता हो, किंतु स्वयं उसमें वे बातें चरितार्थ न होती हों तो आप ही बतलाइये, ग्रामोफोनमें और उसमें क्या अन्तर है ? राजाके पूछनेपर आपने श्लोककी जो व्याख्या की, क्या वे सारी बातें आपमें चरितार्थ होती हैं ?

पण्डितजी—तुम्हारा कहना सत्य है। यह भाव मझमें बिलकुल नहीं है। मनके विपरीत होनेपर प्रत्येक

क्या ईश्वर-साक्षात्कार भी एक वैज्ञानिक सत्य नहीं ?

(पं० श्रीधर्मदेवजी शास्त्री, दर्शनकेसरी, पंचतीर्थ)

ब्रह्मलीन स्वामी श्रीअच्युतमुनिजी महाराज एक तत्त्वदर्शी और पहुँचे हुए सन्त थे। बनारसमें आजसे दस वर्ष पूर्व मुझे जब उनके प्रथम साक्षात्कारका सुअवसर मिला, तब मैंने उनसे कुछ प्रश्न किये थे, जिनमेंसे एक प्रश्नकी चर्चा मैं प्रस्तुत लेखमें करूँगा।

‘महाराज! आप विद्वान्, भक्त और ज्ञानी हैं; कृपया मुझे यह बताइये कि आपको ईश्वरका साक्षात्कार हुआ है? यदि आप भी अबतक ईश्वरका साक्षात्कार नहीं कर सके तो फिर मेरे-जैसे व्यक्तिको तो उसकी प्राप्ति कैसे होगी? कृपया साफ-साफ बताइये—मैं यह जानना चाहता हूँ कि ईश्वरका साक्षात्कार किसीको होता भी है या यह केवल मनकी कल्पनामात्र है?’ मैंने पूछा।

‘तुमने अच्छा प्रश्न किया है; मैं तुम्हें स्पष्टरूपसे कहना चाहता हूँ कि मुझे ईश्वरका साक्षात्कार होता है और सदा सर्वत्र उसीका दर्शन होता है।’

‘लेकिन महाराज! यह कैसे पता चले कि आपका यह ज्ञान यथार्थ है, भ्रम नहीं है?’

‘मैं स्वयं भी तुम्हारी-जैसी स्थितिमेंसे गुजरा हूँ, इसलिये तुम्हारी मनोदशाको मैं समझ सकता हूँ, परंतु अब मैं बिना सन्देह कह सकता हूँ कि मुझे ईश्वरका दर्शन वैसे ही हो रहा है, जैसे मेरे सम्मुख बैठे हुए तुम्हारा और सामने बहती गंगाका। अपने इस ज्ञानकी यथार्थतामें मुझे तनिक भी भ्रम नहीं है। मुझे तो ऐसा लगता है कि मेरा इन्द्रियजन्य ज्ञान धोखा दे सकता है और देता है, परंतु ईश्वर-साक्षात्कार-विषयिणी प्रतीतिमें तो मुझे धोखेका आभास भी नहीं मिलता।’

‘परंतु महाराज! उपनिषदोंमें तो आया है—‘**अविज्ञातं विजानताम्**’ (जो यह कहते हैं कि ईश्वरको मैं जानता हूँ, वे नहीं जानते।)’

‘परंतु भाई! उपनिषद्के इस वचनको जानता हुआ भी कहता हूँ कि मैं ईश्वरको देख रहा हूँ। जब मुझे ईश्वरका दर्शन हो रहा है, तब मैं झूठ क्योंकर बोल सकता हूँ?’

‘क्या महाराज! मैं भी उस परात्पर शक्तिका दर्शन

कर सकता हूँ?’

‘अवश्य; लोग तो ईश्वर-साक्षात्कारको बहुत कठिन बताते हैं, परंतु मेरा अनुभव भिन्न है। सांसारिक विषयोंकी प्राप्तिसे ईश्वर-प्राप्ति आसान है, परंतु मनुष्यको जितनी चिन्ता विषय-प्राप्तिकी है, उतनी इच्छा ईश्वर-प्राप्तिकी नहीं है; यदि उत्कट इच्छा हो जाय तो ईश्वर-साक्षात्कार अविलम्ब हो सकता है। वस्तुतः मनुष्य ईश्वरका साक्षात्कार करना नहीं चाहता, परंतु कहता यह है कि ईश्वर-साक्षात्कार हो नहीं सकता। यह उसकी आत्मविडम्बना है।’

‘महाराज! थोड़ा इस विषयको आज-कलकी वैज्ञानिक भाषामें स्पष्ट कीजिये।’ मैंने विनयपूर्वक कहा।

‘ईश्वर-साक्षात्कार भी एक वैज्ञानिक सत्य है। जिस प्रकार कोई वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशालामें बैठकर एक नियत शास्त्रीय रीतिसे तथा बाह्य साधनोंसे वैज्ञानिक सत्योंका अनुसन्धान करता है, उसी प्रकार एक आध्यात्मिक व्यक्ति भी अध्यात्मशास्त्रकी नियत रीति और शास्त्रीय विधिका अनुसरणकर मात्र आन्तर साधनोंसे उस अनाद्यनन्त सत्यका साक्षात्कार कर सकता है। जिस प्रकार न्यूटनकी बातपर विश्वास करके लोग पृथ्वीके आकर्षण-सिद्धान्तको सिद्धवत् मानकर व्यवहार करते हैं, उसी प्रकार ब्रह्मासे लेकर सहस्रों ऋषियोंके अनुभवके आधारपर आज भी यदि जनता ईश्वरपर विश्वास करके चलती है और कर्ममें प्रवृत्त तथा विकर्मसे निवृत्त होती है तो इसमें क्या आश्चर्य है? और फिर जैसे किसी वैज्ञानिक अन्वेषणके बाद जाने गये सत्यको झुठलानेका अधिकार भी उसी व्यक्तिको है, जो एक सर्वसम्मत वैज्ञानिक पद्धतिसे प्रयोग करके उसके विरोधी सत्यका पता लगाकर पूर्व अनुभवियोंको विश्वास दिला देता है, उसी प्रकार अध्यात्मसम्बन्धी आजतकके अनुभवोंको झुठलानेका भी वही अधिकारी हो सकता है, जो अध्यात्मशास्त्रकी एक वैज्ञानिक पद्धतिसे प्रयोग करके कोई नयी बात कहता है।’

स्वामी श्रीअच्युतमुनिजी महाराजने जो शब्द कहे

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

थे, अक्षरशः वे ही शब्द मैंने नहीं लिखे। लिखना है भी कठिन; परंतु इतना तो मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि स्वामीजीके कथनका तात्पर्य यही था।

× × ×

पिछले आन्दोलनमें जब मुझे देहरादून-जेलमें छः मास रहनेका अवसर आया, तब वहाँ यह प्रश्न फिर उग्ररूपसे मेरे सामने आया। कुछ कम्यूनिस्ट और सोशलिस्ट भाई भी हमारे साथ थे। कम्यूनिज्ममें ईश्वर और धर्मका कोई स्थान नहीं। वह मात्र आधिभौतिक वैज्ञानिक पद्धतिसे विचार करना सिखाता है। हमलोगोंकी— जो धार्मिक दृष्टिकोण रखते हैं—सभी विषयोंको आध्यात्मिक दृष्टिसे विचारनेकी आदत है; इसलिये प्रायः प्रत्येक विचारणीय विषयपर कुछ दूर तो हम दोनोंकी विचार-शैली एक समान चलती; फिर आगे जाकर हम दोनों भिन्न-भिन्न प्रतीत होते। मुझे यहाँ कम्यूनिज्मके गुण-दोषोंपर विचार नहीं करना है, न तो प्रस्तुत लेखके साथ इस विषयका सम्बन्ध है। मैं तो केवल यहाँ यह बताना चाहता हूँ कि आध्यात्मिक सत्यको जाननेकी भी एक वैज्ञानिक पद्धति है।

मैंने अपने कम्यूनिस्ट साथियोंको जो बात कही, उसका निर्देशभर करना चाहता हूँ। मैंने कहा—‘जिस प्रकार अन्य सब भौतिक विषयोंके अलग-अलग शास्त्र हैं, उसी प्रकार अध्यात्मका भी एक सुव्यवस्थित शास्त्र है। आजकल युद्धमें हिंसाके साधनोंसे विजय प्राप्त करनेका सिद्धान्त यूरोपका माना हुआ है और उसके लिये एक शास्त्र है, जिसके अनुसार सैनिकोंको बाकायदा शिक्षा दी जाती है, आक्रमण करने और आक्रमणसे बचने तथा प्रत्याक्रमण करनेका प्रकार सिखाया जाता है। यदि कोई राष्ट्र इस प्रकारके साधनोंका ठीक-ठीक शास्त्रीय ज्ञान प्राप्त न करके युद्ध करे और वह पराजित हो जाय तो इससे उस शास्त्रको झूठा कहना गलती होगी। इसी प्रकार अध्यात्मका भी एक शास्त्र है। जो व्यक्ति अध्यात्मशास्त्रमें प्रतिपादित पद्धतिसे मन, शरीर और बुद्धिका विकास करेगा, वह अध्यात्मसम्बन्धी सत्यका दर्शन कर सकेगा। जैसे आजकल संसारमें प्रायः लोग आधिभौतिक ढंगसे ही विचार करनेके अभ्यस्त हो

गये हैं, उसी प्रकार कभी समय था जब संसारमें और विशेषकर भारतवर्षमें जनताकी एक बड़ी संख्या आध्यात्मिक दृष्टिसे व्यक्ति, समाज और राष्ट्रका विकास करती थी और हमारा विश्वास है कि संसारके कल्याणका वही एक महामार्ग है।’

मेरे इस कथनको सुनकर एक भाईने कहा—
‘ईश्वर और धर्म तथा परलोकपर विश्वास करना
मनुष्यके लिये तभी ठीक था, जब मनुष्य-समाजने
प्रकृतिपर विजय नहीं प्राप्त की थी और वह प्रकृतिकी
विविधताओंको देखकर डरता था; अब तो मनुष्य
प्रकृतिका स्वामी बन गया है।’

‘अब मनुष्य प्रकृतिका स्वामी बन गया है, यह आप कहते हैं; मैं तो यह कहता हूँ—मनुष्यने प्रकृति-दासीको अपनी स्वामिनी बना लिया है। जितना प्रयत्न मनुष्यने प्रकृति-दर्शनके लिये किया है, उसका शतांश भी यदि वह आत्म-दर्शनके लिये करता तो आज मानव-समाजका रूप कुछ और ही होता। आजका मनुष्य देश और कालकी दूरीको जीतनेमें समर्थ हो सका है; परंतु उसने एक मनुष्यको दूसरे मनुष्यसे इतना अधिक दूर कर दिया है कि प्रति बीस वर्षोंमें विश्व-युद्धकी अवस्था उपस्थित हो जाती है। वास्तवमें मनुष्यकी सफलता प्रकृति-विजयी होनेकी अपेक्षा मनोविजयी होनेमें अधिक है। प्रकृतिको उपयोगी बनानेकी अपेक्षा प्रकृति-निर्माताका प्रत्यक्ष करना अधिक अच्छा है और यह कार्य धर्मके बिना नहीं हो सकता।’

‘लेकिन धार्मिक व्यक्ति सदा प्रतिगामी और अन्याय-अत्याचारके समर्थक होते हैं—रूसमें ऐसा ही हुआ था।’

‘यह आपका भ्रम है। धर्मात्मा सदा पतितों और असहायोंका ही साथ देगा। रूसकी बात तो मैं नहीं कहता। हमारे देशमें आज साम्प्रदायिक झगड़े करानेवाले वे ही व्यक्ति हैं, जो धर्मसे वस्तुतः अपरिचित हैं। एक बात और भी है, कैसी भी अच्छी चीज बुरे आदमियोंके हाथोंमें जाकर अच्छी नहीं रहती। धर्म इस नियमका अपवाद नहीं है। इसमें धर्मका दोष नहीं, ‘सैषा पुरुषगर्हा न शास्त्रगर्हा’—यह पुरुष-निन्दा है, शास्त्र-निन्दा नहीं।’

विजय निश्चित है

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

साधनाके क्षेत्रमें काम, क्रोध, लोभ, मोहादि शत्रुओंसे हमारा जो संग्राम है, उसमें हमारी विजय निश्चित है; कारण कि साधनामें सहायक प्रभु हर समय, हर अवस्थामें हमारे साथ हैं। जहाँ अन्तःस्थ परमात्माकी अपार शक्तिमें विश्वास होता है, वहाँ काम-क्रोधादि शत्रु स्वयं दब जाते हैं। फिर वे हमारे सामने सिर भी नहीं उठा सकते। आचार्य शंकर, बुद्ध आदि महापुरुषोंके भीतर जो शक्ति थी, वही शक्ति हमारे भीतर भी है। यदि हम उसे ठीक-ठीक पहचानें और उसकी प्रेरणासे ही अपने कर्मोंका संचालन करें तो सफलता निश्चित है। निरन्तर आत्मनिरीक्षण और साधन करते रहनेसे इन भयंकर कहे जानेवाले शत्रुओंको फिर कोई ढूँढ़े भी नहीं पा सकता। इनकी क्या सामर्थ्य है कि ये फिर हमारी शान्तिको भंग कर सकें!

साधकको निरन्तर उत्साह रखना चाहिये, भगवान्‌के पथमें चलनेवालेको कभी निराश होनेकी आवश्यकता नहीं है। वह निराश हो ही क्यों? अपने लक्ष्यकी साधनाकी ओर जिस क्षण उसने पग बढ़ाया कि प्रभु उसके साथ हुए। जब ‘सर्वलोकमहेश्वर’ हमें हमारे सुहृद्‌के रूपमें सहारा दिये हुए हैं तो फिर हिम्मत क्यों हारना है? मोहसे कातर अर्जुन भगवान्‌से पूछता है—‘प्रभो! अनिच्छित, बलपूर्वक लगाये हुएके सदृश पुरुष किससे प्रेरा हुआ पापका आचरण करता है?’ इस प्रकार सरल बालककी भाँति अर्जुनके पूछनेपर भगवान्‌ कहते हैं—‘अर्जुन! ये काम और क्रोध आसक्ति हैं—ये महाअशन अर्थात् अनन्त भोजनोंसे भी तृप्त नहीं होनेवाले हैं—ये मनुष्यके बहुत बड़े शत्रु हैं।’ ऐसा कहते हुए भगवान्‌ अर्जुनको ललकारते हैं—‘जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम्।’ ‘हे महाबाहो! अपनी शक्तिको समझकर इस दुर्जय कामरूप शत्रुको मार।’

वह शक्ति क्या है ? वह है भगवान्की शक्ति। वह भागवती शक्ति हम सभीमें हैं, जिसे यदि हम अज्ञान और संशयका आवरण हटाकर पहचान लें और उसका बल तथा आश्रय ठीक-ठीक प्राप्त कर लें तो संसारमें इस अजेय दीखनेवाले कामरूपी शत्रुका सदाके लिये उन्मूलन किया जा सकता है। साधनाके क्षेत्रमें ये मायिक शक्तियाँ

(काम, क्रोध, लोभ, मोहादि) ही बाधक हैं, जिनसे साधक अपनेको पहलेसे ही हारा हुआ समझता है। परंतु आत्माकी अपार शक्तियोंको स्वीकार कर लेनेके बाद साधना-क्रममें उसे किसी भी विघ्न-बाधासे परास्त होनेका भय नहीं है। जहाँ आत्माके बलका आश्रय है, वहाँ सभी विरोधी शक्तियाँ स्वतः परास्त हो जाती हैं। इसी भगवदीय शक्तिका आश्रय लेनेपर तथा प्रभुपदकी शपथ लेकर ही लक्ष्मणजीने कहा था—

‘तोरैं छत्रक दंड जिमि तव प्रताप बल नाथ।’

श्रीलक्ष्मणजीने जब इस बलका आश्रय लिया तभी तो **‘डगमगानि महि दिग्गज डोले’**—पृथ्वी डगमगाने लगी थी। हनुमान्जीको जब इस शक्तिका स्मरण होता था तभी वे अतिमानवीय, अलौकिक कार्य सम्पन्न कर डालते थे। जब जाम्बवन्तने इस शक्तिका उन्हें स्मरण दिलाया तभी तो हनुमान्जी सुमेरुपर्वतके समान आकारमें **‘कनक भूधराकार सरीरा’** प्रकट हुए। जहाँ इस अपार दैवी बलका हमने आश्रय लिया, वहीं हमें सभी प्रकारके बल तथा शक्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं।

काम-क्रोध-मोह आदि हमें तभीतक सताते हैं जबतक हम भागवती शक्तिका आश्रय नहीं लेते। गीतामें भगवान् ने कई स्थलोंपर और कई बार घोषणा की है कि 'निरन्तर मुझमें मन लगा लो, सारे विघ्न-बाधाओं और कठिनाइयोंको लौघ जाओगे।'

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि ।

(गीता १८।५८)

एकमात्र भगवान्‌का आश्रय ले लेनेपर फिर पाप-
तापकी भावना ही क्यों आयेगी ? जब प्रभुकी अनन्त शक्ति
निरन्तर, हर अवस्थामें साथ है तो हमें फिर डर किसका
और कैसा ? हमारी सफलता निश्चित है, काम-क्रोधादि
विकारोंपर हमारी विजय निश्चित है ।

हम पूर्ण सफल होंगे या नहीं, हमारा कल्याण होगा या नहीं, प्रभुके दर्शन होंगे अथवा नहीं, इसमें हम सन्देह ही क्यों करें?

गीता तो उद्घोष करती है—

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।

तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥

(2019)

जहाँ योगेश्वर श्रीकृष्ण और धनुर्धर अर्जुन हैं, वहाँ अवश्य ही विजय है। संसारके परम आश्रय भगवान् नारायणका बल ले करके नर यदि अपने कर्तव्यकर्मोंमें प्रवृत्त हो तो उसकी विजय सुनिश्चित है, इसमें सन्देह नहीं है। वे नारायण हर समय हमारे साथ हैं तथा हमेशा हमारे योगक्षेमके लिये मार्गदर्शन करनेहेतु सदा तत्पर रहते हैं। आवश्यकता है हमें धनुर्धर बननेकी—चतुर्दिक् दीखनेवाले इन विकाररूप प्रबल शत्रुओंको परास्त करनेके लिये भगवत्प्रेरणाका अनुभव करते हुए अपने हाथमें शस्त्र-अस्त्र लेनेकी। हमें सदैव अर्जुनकी भाँति ‘शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्’ तथा ‘करिष्ये वचनं तव’—‘मैं आपका शिष्य हूँ, मैं आपकी एक-एक बात मानूँगा।’ इसीकी टेर लगानी चाहिये। फिर तो जीत हमारी है। हम सभी नर हैं—वे ही एक नारायण हैं—हम भगवान्के हैं, भगवान् हमारे हैं, संशय छोड़कर हमें यही दृढ़ निश्चय करना है। भगवान्के वचनोंका विश्वास करके हम उनके ‘योगक्षेमं वहाम्यहम्’ आदि वचनोंमें अखण्ड आस्था रखें। तभी निश्चल, निर्द्वन्द्व और अलमस्त होकर हम भगवत्पथमें चल सकेंगे। भगवान्की तो यह उद्घोषणा ही है कि महापापी भी यदि अनन्यभावसे मुझे भजता है तो वह तत्काल (धर्ममय स्वरूपवाला) धर्मात्मा हो जाता है। यदि वह एक बार भी आर्तभावसे प्रभुको पुकारे और एकमात्र उनकी शरणकी याचना करे तो उसी क्षण उसके सभी पाप भस्म हो जाते हैं और प्रभु उसे अपनी गोदमें उठा लेते हैं। उस परम प्रभुकी हम सन्तान हैं, परम पिता सदा ही यह चाहते हैं कि हम पुण्यात्मा बनें, सत्पथपर चलें—उनके सच्चे पुत्र और भक्त कहलायें। कभी उनके नामपर कलंक न लगने दें। इस अवस्थामें वे हमें सत्पथमें चलते रहनेके लिये सदा सहारा और प्रोत्साहन देते रहते हैं, देनेके लिये सदैव तत्पर रहते हैं। प्रभु तो चाहते ही हैं कि उनकी सभी सन्तान ‘साधु’—सच्चे साधु बनें। जहाँ हम आर्तभावसे ऐसे अशरणशरण प्रभुकी शरणमें गये कि वहीं हमारे जन्म-जन्मान्तरेके पाप-ताप नष्ट हो जायँगे। जब हमारा जीवात्मा प्रभुमय हो जायगा, तब फिर ये इन्द्रियमय वस्त्रवाले शत्रु कहाँ रहेंगे? हमारा गोदभराना

ही शाश्वत शान्ति, सनातन शान्ति प्राप्त करनेका एकमात्र साधन है। हम सभी भगवान् श्रीहरिकी वात्सल्यमयी विशाल गोदमें हैं। आवश्यकता है आँखें खोलकर देखनेकी, हृदय खोलकर अनुभव करनेकी—‘न मे भक्तः प्रणश्यति’—मेरा भक्त कभी नष्ट नहीं होता। भगवान्की अतिशय प्रेम और वात्सल्यमयी यह घोषणा अविश्वसनीय कैसे हो सकती है ? यही तो प्रभुकी आन-बान है, अधमोद्धार ही तो भगवान्का विरद है। फिर चाहे जैसे भी हम हों, चिन्ता क्या ?

खूब धैर्य, उत्साह, प्रेम और मस्तीके साथ हमें निरन्तर भगवान्‌के पथमें चलना चाहिये। उनकी कृपाकी अनवरत वर्षा हम सबपर हो रही है। उस कृपासे गूँगे भी वाचाल हो जाते हैं, लँगड़ा मनुष्य भी दुर्गम पहाड़ लाँघ जाता है। उनकी कृपासे सारे असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाते हैं। भगवान्‌की यह दया तो हमें सहजरूपसे ही प्राप्त है। मनुष्यमात्रपर उनकी यह कितनी बड़ी दया है कि उनके स्मरणमात्रसे मनुष्य आवागमनके चक्करसे सदाके लिये छूट जाता है। ‘यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात् विमुच्यते....’।’ यह भगवान् हरिकी हमपर कैसी आत्यन्तिक दया है। कैसी करुणा है। हमारे लिये कितना कल्याणकारी है, यह उनका करुणापूर्ण वात्सल्य!

यदि हम मुर्देकी भाँति पड़े रहें कि अभी हमसे क्या होगा ? तो यह दुर्लभ मनुष्य-जीवन यों ही नष्ट हो जायगा। इस मनुष्य-जीवनको पाकर भी यदि हम न चेते और अपना कल्याण न कर पाये तो फिर क्या किया ? येन-केन-प्रकारेण जीवनके दिन बिता देना आत्माका महान् अपमान करना है। इसके लिये हमें भारी पश्चात्ताप करना होगा। मनमें ऐसी दीनता कभी न आने दें कि मेरे किये क्या होगा ? यह इस तमोगुणी शरीरका और उसकी बुद्धिका परमात्तामें विश्वासके अभावका लक्षण है। जिस हृदयमें भगवान्की भक्ति और उसकी अपार अहैतुकी दयामें विश्वास है, वहाँ नित्य-निरन्तर प्रकाश, ज्ञान, आनन्द और उत्साह उमड़ता ही रहता है। वहाँ चित्तकी कली-कली खिल जाती है। उस स्थितिमें प्रतिपल एक अपार आनन्दका महासमुद्र लहरें लेता रहता है। वहाँ आनन्द और उत्फुल्लताके सिवा कुछ है ही नहीं। विषाद, अवसाद आदि तो अविश्वासके लक्षण हैं—यह तो तमोगुणकी पिशाचलीला है। प्रमाद, आलस्य और निद्रा—

हृदय पर-हृदय पर रहना—ऐसे विचारोंके हमारे किये क्या

जिसके हृदयमें नील-कमलसदृश भगवान् जनार्दन नित्य-निरन्तर विराजमान हैं, जीवनका सुलाभ और विजय निश्चितरूपसे उसीके लिये है। उसकी पराजय है ही कहाँ? पराजय कभी हो ही नहीं सकती; क्योंकि उसने प्रभुका आश्रय लिया है, इसलिये विजय सुनिश्चित है।

अर्थात् विषयोंमें रमण करना ही मनुष्यके लिये घातक है। प्रत्येक ऐसे विषयको मनसे हटाते रहना चाहिये, जो प्रसन्नतामें बाधक हों। अपनी हानिपर

देरतक नहीं सोचना चाहिये। हानिकी भावना प्रसन्नताका नाश कर देती है। इससे हमारी आध्यात्मिक शक्तिका भी हास होता है। सब प्रकारकी घटनाओंके अच्छे पहलूपर विचार करनेसे मनकी प्रसन्नता बनी रहती है। संसारकी प्रत्येक घटनाके दो पहलू होते हैं। जिस मनुष्यका मन घटनाके बुरे पहलूकी ओर चला जाता है, वह अपनी प्रसन्नताको अपने ही हाथों नष्ट कर डालता है। इसके विपरीत जिसका मन अच्छे पहलूपर चला जाता है, वह अपने आपको प्रसन्न बनाये रखता है। प्रत्येक प्रकारकी हानिसे मनुष्यका कुछ-न-कुछ लाभ होता है और प्रत्येक लाभसे कुछ-न-कुछ हानि होती ही है। हानिकारक घटनाओंमें लाभको ढूँढ़ निकालना बुद्धिमानकी काम है। यदि कोई लाभ प्रत्यक्ष न दिखायी दे तो हमें यह समझना चाहिये कि उसका लाभ तत्काल अप्रत्यक्ष है, पीछे प्रत्यक्ष हो जायगा।

प्रसन्नता एक संक्रामक पदार्थ है। जिस तरह रोग संक्रामक होता है, उसी तरह स्वास्थ्य भी संक्रामक होता है। रोगी मनुष्य अपने रोगका प्रचार आस-पास रहनेवालोंमें करता है; इसी प्रकार स्वस्थ मनुष्यको देखकर दूसरे लोग भी स्वस्थताका अनुभव करने लग जाते हैं। प्रसन्नताका भी यही हाल है। शारीरिक विकार उतने संक्रामक नहीं होते, जितने मानसिक विकार होते हैं। एक रोगी मनुष्यको देखकर दूसरा तुरंत रोगी नहीं हो जाता, पर एक दुखी मनुष्यको देखकर दूसरेका हृदय भी दुःखसे भर जाता है। इसी तरह प्रसन्नचित्त अथवा हँसते हुए लोगोंके समाजमें जाकर हम भी प्रसन्न हो जाते हैं अथवा हँसने लगते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि मनुष्य अपने-आप प्रसन्न रहकर अनायास परोपकार करता है। अंग्रेजी लेखक स्टीवेन्सन (Stevenson)-का कहना है कि प्रसन्नचित्त मनुष्यका मिलना पाँच पौंडके नोटके मिलनेसे अधिक लाभदायक है (A happy man or a woman is a better thing to meet than a five pound note)। मनुष्य जो काम प्रसन्नताकी अवस्थामें करता है, उसीसे दूसरोंका वास्तविक लाभ होता है। बरबस चिढ़कर किये गये कामसे कोई लाभ नहीं होता। यदि कोई मनुष्य

बाध्य होकर दान देता है तो ऐसा दान उसका कोई कल्याण नहीं करता। प्रसन्नतासे दिया दान ही दोनों पक्षोंका कल्याण करता है। प्रसन्नताकी अवस्थामें जो कार्य किया जाता है, वह त्रुटिहीन रहता है। यदि कोई ऐसा काम करते समय भूल हो भी जाती है तो वह तुरंत दिखायी दे जाती है। किंतु अप्रसन्नताकी अवस्थामें किये गये कार्यमें ऐसी अनेक त्रुटियाँ रह जाती हैं, जो काम करते समय हमें दिखायी नहीं देतीं। मनुष्यको अपने ऊपर उतनी ही जिम्मेदारी लेनी चाहिये; जितनी वह प्रसन्नतासे उठा सके।

अप्रसन्नता आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों प्रकारकी शक्तियोंका हास करती है। निराशावादी पुरुष सदा आत्मघात करता रहता है। इसी तरह क्रोधी भी अपनी सारी मानसिक शक्तिका नाश कर डालता है। ऐसे लोगोंका शरीर भी रोगग्रस्त हो जाता है। वे थोड़े ही कालमें अपनी जीवन-यात्रा समाप्त कर डालते हैं। निराशा और क्रोध दोनों ही मनुष्यके लिये घातक हैं। इन दोनोंका घनिष्ठ सम्बन्ध है। क्रोधका लक्ष्य दूसरेका विनाश करना है और निराशाका आत्मविनाश। क्रोध ही कुछ कालके बाद निराशामें परिणत हो जाता है।

मनुष्यको चाहिये कि वह सदा ऐसे वातावरणमें अपने आपको रखे, जिसमें उसके मनकी प्रसन्नता नष्ट न हो। उसे क्रोधी, निराशावादी, नुक्ताचीनी करनेवाले, तथा ईर्ष्यालु लोगोंसे बचना चाहिये। उसे त्यागी और परोपकारी पुरुषोंसे सम्पर्क बढ़ाना चाहिये। यदि उसे ऐसे पुरुषोंका सत्संग प्राप्त न हो तो उसे अपना समय उनके विचारोंका मनन करनेमें बिताना चाहिये। सदाचारी पुरुषोंके विचार पुस्तकोंमें पाये जाते हैं। हम जिस समय किसी महात्माके विचार किसी पुस्तकद्वारा प्राप्त करते हैं, उस समय हम उसके सत्संगका ही लाभ करते हैं। महात्मागण सदा प्रसन्नचित्त रहते हैं और अपनी मानसिक अवस्थाका प्रभाव दूसरोंपर अनायास ही डालते रहते हैं।

भूखा मनुष्य प्रसन्नचित्त नहीं रह सकता। प्रसन्नता क्षुधा-शान्तिकी परिचायिका है। वह पूर्णताके अनुभवका परिणाम है। अतएव जो मनुष्य अनेक प्रकारके पदार्थोंका

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

इच्छुक है, वह कदापि प्रसन्नचित्त नहीं रह सकता। बिना मनकी भूखको शान्त किये प्रसन्नता नहीं आती। यह भूख शरीरकी भूखके समान नहीं है। शारीरिक भूख भोजनकी प्राप्तिसे शान्त होती है, मनकी भूख विषयोंके प्राप्त होनेसे

और भी बढ़ती है। यह ज्ञान-वैराग्यसे ही शान्त होती है। मनका भटकना जबतक जारी है, तबतक प्रसन्नताके दर्शन नहीं होते। जब मन आत्मामें ही रमण करने लगता है, तब उसकी स्वाभाविक प्रसन्नता फूट पड़ती है।

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई

(श्रीइन्दरचन्दजी तिवारी)

जब उस प्रेमकी दीवानीने अनुभव किया होगा इस परम अवस्थाको, प्रवेश किया होगा इस दिव्य अवस्था के संसारमें, एकाकार हो गयी होगी जब आपके लिये उन पावन पुनीत क्षणोंमें उस प्रेमरसमें डूबी भक्त-शिरोमणि मीराके अतिरिक्त कौन रहा होगा ?

जब उसने सारी लोक-लाज, देश-काल, उचित-अनुचितका भाव भूलकर एक इकतारेके तारोंको छेड़कर उसके हृदयको भी अपनी पावन पुनीत उँगलियोंका स्पर्श देकर उसमें भी भक्तिविह्वलता, भावविह्वलता उत्पन्न की होगी तो वह भी तो गा उठा होगा 'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई।'।

जब बँध गये होंगे उस संत-शिरोमणिके पद-
पंकजोंमें प्रेमके घुँघरू, भक्तिके घुँघरू, विरहके घुँघरू,
नवजीवनके घुँघरू, दिव्य संगीतके घुँघरू, पावन नादके
घुँघरू, प्रेमरससिक्त घुँघरू तब प्रत्येक पदचापसे प्रत्येक
घुँघरूसे झंकृत हुए होंगे दिव्य स्वर 'मेरे तो गिरधर
गोपाल दूसरा न कोई'।

जब वह चल होगा सारी मर्यादाका बाँध तोड़कर प्रेम-पयोधि, अविरल अश्रुधारा नयनोंमें भरकर जब वह चली होगी नेत्रोंसे प्रेमकी गंगा, जब प्रत्येक अश्रुकण परिपूरित हो उठा होगा प्रेमाससे, प्रेमके संगीतसे, तब एक पावन दिव्य घटना घटी होगी इसी धरतीके ऊपर, इसी अम्बरके नीचे, जब मन्दिरके प्रांगणमें साँवरेकी मूर्तिके सम्मुख जड़-जंगम-चेतन सम्मिलित हो गये होंगे क्षणार्धके लिये उस पावन पुनीत दिव्य घड़ीमें और वनके मयूर, अमराईमें बैठी कोकिला और पपीहेने गाया होगा ‘मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई’।

स्वाभाविक गति, वायुका वेग, पृथ्वीकी चाल, भोगनेके लिये, डूब जानेके लिये, मगनमन होनेके लिये, उस दिव्य घड़ी, दिव्य आनन्दकी, तो भला इस पंक्तिके सिवा और क्या गाया होगा उन सबने *‘मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई’*।

आप अपने भक्तके वशमें हैं, रहते हैं न, ऐसा आपने सदैव कहा है—

नाहं वसामि वैकुण्ठे.....।

आपका सर्वस्व आपका भक्त ही तो है।

आपका तन, मन, धन, प्राण आपका भक्त ही तो है ।

आपकी अनुभूति आपके भक्तके द्वारा ही तो की जा सकती है।

भक्तके बिना आप अपने अस्तित्वको नहीं मानते।

भक्तके बिना आप पाषाणकी मूर्तिके अतिरिक्त और

रह ही क्या जाते हैं?

भक्त ही आपकी प्रतिष्ठाका सार हैं, जीवन्तता हैं और जीवन हैं।

भक्तकी भक्तिका सूत्र यही तो है जो मीराको उपलब्ध हो गया था और वह गा उठी थी... *‘मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई’*।

मानवसे देवत्वकी प्राप्ति इन्हीं क्षणोंमें तो होती है ।

मानव-जीवनकी धन्यता इन्हीं क्षणोंको उपलब्ध होनेपर ही तो प्राप्त होती है।

हे भक्तवत्सल भगवान् श्रीनिवास ! जिसको आपने कृपाकर ऐसे दिव्य क्षण उपलब्ध करा दिये, उसे भला अब क्या चाहिये ? जिसको आपकी दी गयी अनुभूति प्राप्त हो गयी है, उसे तो बस... *‘मेरे तो गिरधर गोपाल*

साधकोंके प्रति—

['हरि व्यापक सर्वत्र समाना']

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

यह संसार जो हमें इन्द्रियोंद्वारा दिखायी दे रहा है और जो कुछ भी हमारे जाननेमें आ रहा है, क्या वह ठीक वैसा ही स्थिर है, अथवा प्रतिक्षण बदल रहा है? विचार करनेसे पता चलता है कि दृश्यमात्र प्रतिक्षण बदल रहा है। शरीर जिस दिन जन्मा था, उस दिन कैसा था और आज कैसा है? यह तो हमारे प्रत्यक्ष अनुभवकी बात है। दो-तीन वर्षकी आयुमें जिसने इस शरीरको देखा हो, वही इसे आज देखे तो इतना बदला हुआ पायेगा कि पहचानना कठिन हो जायगा। पाँच वर्ष पूर्व हमारा शरीर जैसा था, वैसा आज नहीं है, इसमें किसीको भी सन्देह नहीं होगा। अतः यह बात दृढ़तासे कही जा सकती है कि शरीर बदल गया। परंतु कब बदला? यह तो है नहीं कि दस वर्षतक बदला नहीं और एक वर्षमें ही बदल गया। स्पष्ट है कि वह प्रत्येक वर्षमें बदलता रहा है। जो प्रत्येक वर्षमें बदला है, वह बारह महीनोंमें—से ग्यारह मासतक नहीं बदला, एक मासमें ही बदल गया, ऐसा भी नहीं है। अतः कहना पड़ेगा कि वह प्रत्येक महीनेमें बदला है। जो प्रतिमास बदला है, वह प्रतिदिन बदला है और इसी तरह प्रतिदिन बदलनेवाला प्रत्येक घंटेमें बदला है, प्रत्येक क्षणमें बदला है। इस प्रकार यह सिद्ध हो गया कि शरीर प्रतिक्षण बदल रहा है। क्षण-क्षणमें होनेवाला परिवर्तन दिखायी न दे, यह अन्य बात है। गम्भीरतासे सोचें तो स्पष्ट प्रतीत होगा कि संसार परिवर्तनके अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं, प्रतिक्षण क्रिया-ही-क्रिया हो रही है। इस तथ्यकी सत्यतामें किसीको सन्देह नहीं होना चाहिये।

जो वस्तु प्रतिक्षण बदल रही है, उसे 'है' अर्थात् स्थिर कैसे कहा जाय? वह तो गंगा-यमुनाके जलकी भाँति बह रही है। गंगाजीके प्रवाहसे भी इसका प्रवाह तेज है। जो बदल रहा है, वह 'नहीं है' और जो 'नहीं है', वह 'है' के रूपमें अर्थात् स्थिर दिखायी दे रहा है—ये दोनों बातें परस्पर सर्वथा विरुद्ध हैं। 'है' तब तो बदलता नहीं, बदलता है तो 'है' नहीं। बदलता है तो 'है' कैसे? और

'है' तो बदले कैसे? इससे यह सिद्ध हुआ कि यह 'होनापन' संसारका नहीं है, प्रत्युत परमात्माका है, जिससे यह संसार 'नहीं' होता हुआ भी 'है' दीखता है।

एक स्थूल दृष्टान्त है—बूँदीके लड्डूमें प्रत्येक दाना बेसनद्वारा निर्मित है। बेसन फीका होता है, किंतु फीके बूँदीके दाने चीनीकी चाशनीमें डालनेसे मीठे हो जाते हैं। चीनीके संगसे बेसनकी फीकी बूँदी भी मीठी प्रतीत होने लगती है, तब चीनीके मीठेपनमें किसीको सन्देह कैसे होगा? उसी प्रकार प्रतिक्षण नष्ट होनेवाले नश्वर पदार्थोंको भी जो 'है' करके दिखा रहा है, उस परमात्माके 'होनेपन' में सन्देह कैसे हो सकता है? जैसे चीनीकी मिठास लड्डूमें सर्वत्र परिपूर्ण है, उसी तरह संसारमें वह 'है' (परमात्मा) सर्वत्र परिपूर्ण है। सत्य तो यह है कि इस 'है' के अन्तर्गत ही संसार दिखायी दे रहा है।

हम कहते हैं—'मैं शरीर हूँ और यह संसार है।' परंतु वस्तुतः ये भिन्न न होकर एक ही तत्त्व हैं अर्थात् शरीर और संसार एक जातिके हैं, यथा—'छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा॥' (मानस ४।११।४)। दूसरी ओर 'हूँ' (जीवका होनापन) और 'है' (परमात्माका होनापन) एक जातिके हैं। अथवा यों कहिये कि 'हूँ' और 'है' तत्त्वतः एक ही हैं। संसारके कण-कणमें बूँदीके दानोंमें चीनीकी तरह 'है' व्याप्त है। यहाँ इतना अन्तर अवश्य है कि चीनीके बिना बूँदीकी (स्वतन्त्र) सत्ता है, परंतु (परमात्माके बिना) संसारकी स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। संसार तो केवल रागके कारण ही सत्त्वरूप प्रतीत हो रहा है। जब परमात्मतत्त्वके साक्षात्कारद्वारा रागका अत्यन्त अभाव हो जाता है, तब सब ओर केवल परमात्मा ही दीखते हैं।

एक बात और ध्यान देनेकी है—जिनकी दृष्टि संसारसे परे कुछ देखना ही नहीं चाहती, उन्हें संसारको देखते समय परमात्मा दिखायी नहीं देते, संसार-ही-संसार दिखायी देता है। इसी प्रकार जो पूरी श्रद्धासे 'है'

(रा०च०मा० १।१८५।५)

[प्रेषक—श्रीकुँवरसिंहजी]

‘जब सब लोग कथाकी इतनी प्रशंसा करते हैं तो मैं भी एक दिन जाऊँ।’ उसने किसीसे भी बतलाया नहीं। बुरका डालकर अकेली ही घरसे निकल पड़ी। पड़ोसीके घर जाकर, जो जातिका वैश्य था, उसकी स्त्रीके साथ कथामें चली गयी और पीछे स्त्रियोंके साथ

बैठ रही ।

कथामें किसे पता कि कौन आया और कौन गया। सब लोग कथा-सुधाके पानमें तल्लीन थे। पूर्ण निस्तब्धता छायी हुई थी।

प्रसंग था श्रीरघुनाथजीके वनवासके समयका केवटका वार्तालाप। महात्माजीकी वाणीने प्रसंगमें और भी आकर्षण भर दिया था। श्रोताओंमें ऐसा एक भी व्यक्ति न था जिसके नेत्र सूखे हों। करुणरसकी धारा चल रही थी।

महात्माजीने प्रसंगवश भक्त रसखान और सदन कसाईकी कथा भी सुनायी और केवटकी भक्ति तथा श्रीरघुनाथजीकी उदारता एवं दयाका स्पष्ट चित्र श्रोताओंके सम्मुख रख दिया।

वक्ता स्वयं कथामय हो रहे थे। उनके नेत्रोंसे दो अविरल धाराएँ निकलकर मानसके पृष्ठोंको स्नान करा रही थीं। वे बार-बार गला भर जानेसे बीचमें रुक जाते और नेत्र पोंछकर फिर बोलने लगते।

समय हो गया था और प्रसंगकी गम्भीरतासे वक्ताका कण्ठ अवरुद्ध हो गया था। कोई नहीं चाहता था कि कथा बन्द हो, पर वक्ताने श्रोताओंके आग्रहपर भी शेष प्रसंग कलके लिये छोड़कर कथाका विश्राम किया। आरती हुई, प्रसाद वितरण हुआ। लोग अपने-अपने घरोंको लौटने लगे।

वह वैश्य-स्त्री उठी और जमीरनसे चलनेको कहने लगी। जमीरनने उसे रोका। तनिक अवसर मिला, वे दोनों महात्माजीके चरणोंमें प्रणाम करके एक ओर खड़ी हो गयीं। महात्माजीने पूछा 'क्या पछना है?'

‘आप जिस पुस्तकसे कथा कहते थे, उसे क्या मैं पढ़ सकती हूँ?’ जमीरन वैसे हिन्दी अच्छी प्रकार पढ़ लेती थी।

‘क्यों इसमें क्या आपत्ति है?’ महात्माजीने साश्चर्य कहा। दूसरी स्त्रीने बतलाया ‘ये मुसलमान हैं।’

सबका अधिकार है। रघुनाथजी केवल हिन्दुओंके ही थोड़े हैं, वे तो सबके हैं।' महात्माजीने एक छोटी-सी मानसकी प्रति लाकर उसे दे दी। 'इसे नित्य पढती रहो और राम-राम कहती रहो।'

जमीरनने झुककर महात्माजीके चरणोंमें मस्तक
रखा। उसने मन-ही-मन महात्माजीको अपना गुरु
चुन लिया।

उसी दिनसे जितने दिनतक महात्माजी आगरेमें रहे, वह नित्य कथामे आती रही। कथाके आरम्भमें आती और कथाके समाप्त होनेपर उठकर चली जाती।

(३)

घरके और मुहल्लेके मुसलमानोंने बड़ा हल्ला-गुल्ला मचाया कि जमीरन तो काफिर हो गयी। बात कुछ नहीं थी, वह नमाज पढ़ने अब नहीं जाती थी और हिन्दुओंकी रामायण दिनभर पढ़ा करती थी। उसने मांसभक्षण भी छोड़ रखा था।

डॉक्टरसाहब क्या करते? लड़कीका मोह छोड़ा नहीं जाता था। डर था कि अधिक कड़ाई करनेपर वह रो-रोकर बीमार न हो जावे और समाजके मुसलमान उनके पीछे पड़े हुए थे। अन्ततः उन्होंने लोगोंसे स्पष्ट कह दिया कि मैं लड़कीकी इच्छामें बाधा नहीं डालूंगा।

समाज तो ऐसे ही चलता है। लोगोंने कुछ दिन तो बहुत व्यंग्य कसे और फिर जैसे-जैसे बात पुरानी पड़ती गयी, उसे भूल गये। उनके लिये विशेषसे वह साधारण बात हो गयी और सब तो शान्त हो गये, पर जमीरनकी भाभी और भाई शान्त नहीं हुए। वे बराबर उसके पीछे पड़े थे। भाईका कहना था कि 'वह शादी कर ले और काफिरोंकी इस पुस्तकको फेंक दे।' भाभी उसके मांस न खानेसे चिढ़ती थी और उसे व्यंग्यमें 'भगतिन' कहकर पुकारती थी।

पिताकी उदारता और प्रेमने जमीरनको सुविधा दे रखी थी। पिताके भयसे भाई अधिक उद्दण्डता नहीं कर पाता था। किसी प्रकार दिन कटते जाते थे।

जमीरनका मन इस परिवारसे ऊबता ही गया। उसे

आजतक वैष्णवोंमें पगली माईका बड़े आदरके साथ स्मरण किया जाता है। महात्मा लोग उसका दृष्टान्त श्रेष्ठ भक्तोंकी चर्चा चलनेपर दिया करते हैं।

अनन्य शरणागति

(श्रीराजेन्द्रप्रसादजी द्विवेदी)

श्रीमद्भगवद्गीताके सप्तम अध्यायके प्रथम श्लोकमें भगवान् श्रीकृष्णने अपने समग्र रूपसे अर्जुनको अवगत करानेहेतु कहा—‘मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः। असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु॥’ अर्थात् हे पार्थ! अनन्य प्रेमसे मुझमें आसक्तचित्त तथा अनन्य भावसे मेरे परायण होकर योगमें लगा हुआ तू जिस प्रकारसे सम्पूर्ण विभूति, बल, ऐश्वर्यादि गुणोंसे युक्त, सबके आत्मरूप मुझको संशयरहित जानेगा, उसको सुन।

अपने उपदेश-क्रममें भगवान् श्रीकृष्णने अन्यत्र अनेक स्थलोंपर चित्तको अपनेपर तन्मयतापूर्वक केन्द्रित करनेपर विशेष बल दिया है। उन्होंने अपने श्रीमुखसे जितेन्द्रिय पुरुषकी चित्त-वृत्तिको अपनेमें निरन्तर लगानेको आत्मज्ञान एवं ब्रह्मज्ञानका अनिवार्य सोपान माना है। अन्तःकरणको प्रभु-चरणोंमें सर्वान्तर भावसे नियोजित करनेके आध्यात्मिक महत्त्वको रेखांकित करते हुए भगवान् श्रीकृष्णने अनेक प्रसंगोंमें घोषणा की है, यथा—‘अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।’ (गीता ९।२२) अर्थात् जो अनन्य प्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वरको निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भावसे भजते हैं...। ‘मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।’ (गीता ९।३४) श्रीभगवान् बोले—हे अर्जुन! मुझमें मनवाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करनेवाला हो तथा मुझको प्रणाम कर। ‘मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।’ (गीता १०।९) अर्थात् निरन्तर मुझमें मन लगानेवाले और मुझमें ही प्राणोंको अर्पण करनेवाले भक्तजन मुझमें ही निरन्तर रमण करते हैं। ‘मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।’ (गीता १२।२) अर्थात् मुझमें मनको एकाग्र करके निरन्तर मेरे भजन-ध्यानमें लगे हुए भक्तजन... इत्यादि। ‘मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।’ (गीता १२।८) अर्थात् श्रीभगवान् बोले—मुझमें मनको

लगा और मुझमें ही बुद्धिको भी लगा...। ‘मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि।’ (गीता १८।५८) अर्थात् मुझमें चित्तवाला होकर तू मेरी कृपासे समस्त संकटोंको अनायास ही पार कर जायगा।

उपर्युक्त सभी श्रीवचनोंमें भगवान् श्रीकृष्णने मनकी एकाग्रता, तन्मयता, एकोन्मुखता तथा अपने प्रति पूर्ण समर्पणके महत्त्वको स्पष्ट किया है।

इस संक्षिप्त लेखमें श्रीमुखसे निकले श्लोकके प्रारम्भिक दो शब्दों अर्थात् ‘मयि’ तथा ‘आसक्तमनाः’ पर प्रकाश डालनेका प्रयास किया गया है। अस्तु, पहले जीवके मनकी थोड़ी व्याख्या अभीष्ट है। यह तो सर्वविदित ही है कि मानव मन वायुके समान ही अत्यन्त चंचल, अस्थिर तथा भ्रमणशील है। मन स्वभावतः कभी भी, कहीं भी क्षणभरके लिये भी स्थिर नहीं रहता, जैसा कि अर्जुनने ठीक ही कहा है, यथा—‘चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्। तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥’ (गीता ६।३४) हे श्रीकृष्ण! यह मन बड़ा चंचल, प्रमथन स्वभाववाला, बड़ा दृढ़ और बलवान् है। इसलिये उसको वशमें करना मैं वायुको रोकनेकी भाँति अत्यन्त दुष्कर मानता हूँ। अर्जुनके इस कथनकी पुष्टि भगवान् स्वयं इन शब्दोंमें करते हैं—‘असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।’ (गीता ६।३५) हे महाबाहो! निःसन्देह मन चंचल और कठिनतासे वशमें होनेवाला है। भगवान्ने आगे भी कहा है—‘असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मतिः।’ (गीता ६।३६) अर्थात् जिसका मन वशमें किया हुआ नहीं है, ऐसे पुरुषद्वारा योग दुष्प्राप्य है।

तात्पर्य यह कि मनोनिग्रह अत्यन्त कठिन तथा दुष्कर है। इसके अतिरिक्त मनकी एकाग्रता तथा एकोन्मुखता भी बहुत दुस्साध्य है। इस सन्दर्भमें ध्यातव्य है कि मानव-जीवनमें मनका बड़ा महत्त्व है। वास्तवमें

गोस्वामी तुलसीदासजीने ‘श्रीरामचरितमानस’ में कतिपय प्रमुख भौतिक आकर्षणोंका (जिन्हें ‘आसक्ति’ की संज्ञा दी गयी है)–का वर्णन स्वयं भगवान् श्रीरामके श्रीमुखसे उस समय करवाया है, जब विभीषण प्रभुकी शरणमें उपस्थित होता है, यथा—

जननी जनक बंधु सुत दारा । तनु धनु भवन सुहृद परिवारा ॥

(रा०च०मा० ५।४८।४)



भगवान्ने कहा—हे विभीषण! माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, शरीर, धन, घर, मित्र और परिवार—ये दस प्रमुख आसक्तियाँ जीवमात्रको बन्धनमें जकड़े रहती हैं। इन सभी तथा अन्य अनेक आकर्षणोंसे सर्वथा विरक्त होकर जो व्यक्ति मेरे चरणोंमें पूर्णतया समर्पित हो जाता है, वह मुझको प्राप्त कर लेता है; मेरा अत्यधिक प्रिय पात्र बन जाता है। प्रभुने आसक्तियोंसे निवृत्तिका उपाय बताते हुए कहा—

सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहि बाँध बरि डोरी ॥
समदरसी इच्छा कुछ नाहीं। हरष सोक भय नहि मन माहीं ॥

(रा०च०मा० ५।४८।५-७)

प्रभु श्रीराम बोले कि इन सब (उपर्युक्त आसक्तियों)-
के ममत्तारूपी तागोंको बटोरकर और उन सबकी एक
डोरी बटकर उसके द्वारा जो अपने मनको मेरे चरणोंमें
बाँध देता है अर्थात् सारे सांसारिक सम्बन्धोंका केन्द्र मुझे

बना लेता है, जो समदर्शी है, जिसे कुछ भी इच्छा नहीं है और जिसके मनमें हर्ष, शोक और भय नहीं है—
ऐसा सज्जन मेरे हृदयमें वैसे ही बसता है, जैसे लोभीके हृदयमें धन बसा करता है।

उपर्युक्त विवरणमें विविध आसक्तियोंका उल्लेख है, जिनके अतिरिक्त अन्य भी अनेक आकर्षण हैं, जो मनको भगवान्से विमुख करते हैं। ध्यातव्य है कि विषयासक्त मन जीवको बाँधता है और निर्विषय मन उसे मुक्ति प्रदान करता है। मानव मनका परम तथा चरम लक्ष्य है आभ्यन्तर वृत्तिका पूर्णतया भगवद्मय हो जाना; प्रभुके प्रति सर्वतोभावेन अनुरक्त होकर समर्पित हो जाना। ऐसी स्थितिको ही भगवान् श्रीकृष्णने ‘मय्यासक्तमनाः’ की संज्ञा दी है। संशयरहित होकर अनन्य भावसे प्रभुके प्रति पूर्ण आसक्ति रखनेवाले तथा निष्काम भावसे परमेश्वरका नित्य-निरन्तर चिन्तन करनेवाले श्रेष्ठ भक्तजनोंके लिये परमात्माका पूर्ण आश्वासन है—‘अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥’ (गीता ९।२२) अर्थात् जो अनन्यप्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वरको निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्कामभावसे भजते हैं, उन नित्य-निरन्तर मेरा चिन्तन करनेवाले पुरुषोंका योगक्षेम मैं स्वयं प्राप्त कर देता हूँ। प्रभु श्रीरामने भी विभीषण-शरणागतिपर यही आश्वासन दिया था—

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।

अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम॥

(वा०रा० ६।१८।३३)

अतएव हम सभीको अनन्य भावसे प्रभुके चरणोंमें पूर्णरूपेण आसक्त होकर परम कल्याणकी ओर अग्रसर होना चाहिये।

शरण सफलताकी कुंजी है, निर्बलका बल है, साधक का जीवन है, प्रेमीका अन्तिम प्रयोग है, भक्तका महामन्त्र है, आस्तिक का अचूक अस्त्र है, दुखीकी दवा है, पतितकी पुकार है। वह निर्बलको बल, साधकको सिद्धि, प्रेमीको प्रेमपात्र, भक्तको भगवान्, आस्तिकको अस्ति, दुखीको आनन्द, पतितको पवित्रता, भोगीको योग, परतन्त्रको स्वातन्त्र्य, मग्नको मुक्ति, दीसको सत्त्व और मार्गको उत्सुकता बनाती है।

‘रास रच्यौ बन कुँवर-किसोरी’

(डॉ० श्रीमती नीरूजी रस्तोगी)

रसेश्वर कृष्णके वेणुनादको सुनकर कौन ऐसा हृदयहीन होगा, जो उनके रसात्मक आवाहनको नकारकर उनके निकट न आये। उसको आना ही होगा; क्योंकि रासलीला परात्पर ब्रह्मकी अपनी जीवात्माओंको लौकिक धरातलसे पराङ्मुख करके स्वानन्दमें आकण्ठ सराबोर करनेकी लीला है। आनन्दका नाम ही रस है और ब्रह्मके लिये ‘रसो वै सः’ कहा जाता है। ‘स एकाकी न रमते’ ऐसा श्रुतियोंमें कहा गया है। वह अकेले कैसे रमण करे? इसीलिये उन ब्रह्माण्डनियन्ता श्रीकृष्णने द्वितीय स्वरूप अर्थात् स्वयंसे ही निःसृत अपने ही रसात्मक स्वरूप ब्रजांगनाओंकी इच्छा की। फलस्वरूप स्वच्छ शरच्चन्द्रिका-धौत—निर्मल विभावरीमें जब रास प्रारम्भ होनेसे पूर्व मोहनका वेणुवादन होता है, तब ब्रज-गोपिकाएँ अपने समस्त लौकिक आधानोंको त्यागकर शीतल-मन्द-सुगन्ध समीरसे मादक-तरंग-संकुल



यमुना-तटपर जा पहुँचती हैं। ये कृष्णकी चिर-विरहिणी नायिकाएँ हैं। जैसे ही अंश अपने अंशीसे बिछुड़ता है, उसका हृदय मिलनके लिये सदा-सर्वदा तड़पता रहता है—

जब मोहन मुरली अधर धरी।

गृह व्यवहार थके आरज पथ तजत न संक करी।
पद-रिपु पट अट्क्यो आतुर ज्यों उलटि पलटि उबरी॥

इसीलिये उन गोपिकाओंके कर्णपट निर्जीव मुरलीके मधुरनादके रससे जब आप्लावित होते हैं, तब उनकी देह-दशा बिसर जाती है—

मुरली सुनत भई सब बौरी ।

छूटि सब लाजि गई कुल कानी । सुनि पति-आरज-पन्थ भुलानी ॥

मुरलीके प्रति ब्रजांगनाओंके उपालम्भ उनके हृदयकी प्रेमाभक्तिकी सजीवताको प्रकट करते हैं। कृष्णके मुरली-प्रेमके कारण गोपांगनाएँ आपसमें अनेक प्रकारकी चर्चा करती हैं और उसको सपत्नीके रूपमें मानने लगती हैं—
मुरली तऊ गोपालहि भावति।

सुन, री सखी! जदपि नंदनंदहि नाना भाँति नचावति॥

राखति एक पाँव ठाड़े करि अति अधिकार जनावति।

आपुन पौढ़ि अधर सज्जा पर कर पल्लव सों पद पलटावति॥

भ्रुकुटी कुटिल, कोप नासापुट हम पर कोप जनावति।

रास-रस-आवेष्टित गोपकन्याओंके स्वरूपका अनुदर्शन आचार्योंने बृहद्गमनपुराणमें साक्षात् श्रुतिरूपा गोपीजनके रूपमें किया है—

न स्त्रियो ब्रजसुन्दर्यः पुत्र ताः श्रुतयः किल।

नाहं शिवः शेषश्च श्रीश्च ताभिः समाः क्वचित्॥

षष्टिवर्षसहस्राणि मया तप्तं तपः पुरा।

तथापि न मया प्राप्ताः तासां वै पादरेणवः॥

अर्थात् ‘ब्रजकी रमणियाँ साधारण स्त्रियाँ नहीं हैं।

ये तो श्रुतियाँ ही हैं अर्थात् श्रुतियाँ गोपियोंका रूप धारणकर ब्रह्मके साथ रमती थीं। न मैं, न शिव, न शेष या न लक्ष्मीजी भी उनके बराबर नहीं हैं। पूर्वकालमें साठ हजार वर्षतक मैंने तपस्या की, तब भी उनका पद-रज भी मुझे नहीं मिल सका।’

रसात्मा कृष्ण गोपांगनाओंके अतिरिक्त अन्य किसीके साथ रमणकी इच्छा ही नहीं करते हैं, वे उनकी स्वयम्भूता अंगी, संगी एवं रंगी हैं। इसीलिये उनकी रसमयी लीलाओंका एकमात्र अधिष्ठान या तो वे स्वयं हैं या उनकी निजस्वरूपभूता गोपीजन और आह्लादिनी शक्तिस्वरूपा रासेश्वरी श्रीराधाजी। रासलीला भगवान् श्रीकृष्णकी भूमण्डलके जीवोंको रसमयता प्रदान करनेकी अत्यन्त दिव्यातिदिव्य लीला है।

‘रास’ शब्दका मूल अर्थ ‘रस’ है और रसस्वरूप

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

भगवान् श्रीकृष्ण ही हैं। जिस दिव्य क्रीड़ामें एक ही रस अनेक रसोंमें रूपान्तर धारण करता हुआ अनन्त रसोंका समास्वादन करे तथा रस-समूहमें प्रकट होकर स्वयमेव आस्वाद्य-आस्वादक लीला धाम और विभिन्न लीलायुक्त आलम्बन एवं उद्दीपनके रूपमें क्रीड़ा करे, उसीका नाम 'रस' है। भगवान् श्रीकृष्णकी यह लीला गोलोकके दिव्य धाममें दिव्य रूपमें निरन्तर हुआ करती है।

भगवान् श्रीकृष्णका वेणुनाद जड़को चेतन, चेतनको जड़, विक्षिप्तको समाधिस्थ एवं समाधिस्थको विक्षिप्त बना देता है, किंतु इस रास-रसकी अधिष्ठात्री कौन हैं ? श्रीकृष्णकी आत्मभूता श्रीराधाजी, जो कि श्रीकृष्णकी राससे सम्बन्धित समस्त क्रियाकलापोंकी शिक्षिका हैं—
सिखवत हरि को मुरली बजावन।

सप्तारंघ्र पर धरत अंगुरिदल कंध बाहुधर मधुरे गावन॥
सरस भेद जति राग कान्हरो गति विलास वर नयन नचावन।
कृष्णादास बल-बल वैभवकी गिरिधर पिय प्यारी मनभावन॥

सम्पूर्ण ब्रह्माण्डको नचानेवाले श्रीकृष्णको रासमें नृत्यकी शिक्षा रासेश्वरी श्रीराधाजी ही देती हैं; क्योंकि रास-रसकी वास्तविक भोग्या और आयोजिका वे ही हैं, जो कि सकल गुण और कला-प्रवीणा हैं। इसलिये रासकी संकल्पना और आयोजनमें उन्हींकी मुख्य सहभागिता है—
पिय को नचवन सिखवत प्यारी।

वृन्दावन में रास रच्यो है शरद रैन उजियारी॥
ताल मृदंग उपंग बजावत अति प्रवीन ललिता री।
रूप भरी गुण हाथ छरी लिए डरपत लाल बिहारी॥
वीणा वेणु नूपुर ध्वनि बाजत खगमृग बुद्धि बिसारी।
'व्यास' स्वामिनी की छवि निरखत रीझ देत करतारी॥

रास-लीला स्थलशोधिका श्रीयमुना हैं, उनके तटबन्ध कृष्णकी कामदेवपर विजयलीलाके क्रीड़ास्थलके साथ ही मूक सूचक भी हैं। श्रीकृष्णका सर्वाधिक प्रिय स्थल वृन्दा विपिनमें स्थित वंशीवट है, जो कि अनादिकालसे उनकी लीलाका साक्षी और सहचर है। गोपांगनाएँ और श्रीकृष्ण घनमें विद्युत् तरंगोंकी भाँति एक-दूसरेमें संग्रथित हैं। क्या जीवात्मा और ब्रह्मकी स्थिति भी ऐसी नहीं है, अर्थात् ऐसी ही है—

मानो माई घन-घन अन्तरदामिनि ।

घन दामिनि दामिनि घन अन्तर शोभित हरि ब्रज भामिनि ॥
यमुना पुलिन मल्लिका मुकुलित शरद सुहाई जामिनि ।
सुन्दर राशि गुण रूप राशि निधि आनन्द मन विश्रामिनि ॥
रच्यौ रास मिल रसिकराय सौं मुदित भई ब्रज भामिनि ।
रूप निधान श्यामघन सुन्दर अंग-अंग अभिरामिनि ॥
खंजन मीन मयूर हंस पिक भई भेद गज गामिनि ।
कौतुक घने सूर नागर संग काम विमोहो कामिनि ॥

केलिकलासम्पूर्ण कृष्ण ब्रह्मका पूर्ण रूप तो हैं ही, साथ ही रसराज शृंगारके एकमात्र अधिष्ठान भी हैं। भगवान् श्रीकृष्ण गीताजीमें स्वयं कहते हैं—

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् ।

धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ ॥

‘हे भरतश्रेष्ठ! मैं बलवानोंका आसक्ति और कामनाओंसे रहित बल अर्थात् सामर्थ्य हूँ और सब भूतोंमें धर्मके अनुकूल अर्थात् शास्त्रके अनुकूल काम हूँ।’

इसीलिये कृष्णरसमें डूबी गोपियाँ जिनका भूतलपर अवतरण एकमात्र उनको प्राप्त करनेके लिये हुआ था उनके आवाहनपर तत्काल आनन्दरूपमें सराबोर होनेहेतु दौड़ पड़ती हैं। नृत्यका ऐसा अद्भुत समाँ बँधता है कि जड़-चेतन सभी उस रसमें डूब जाते हैं। नाद ब्रह्मके साकार रूप सांगीतिक वाद्य यन्त्रोंके साथ रासका रस अलौकिक हो जाता है—

रास रच्यौ बन कुँवर-किसोरी ।

मंडल-विमल-सुभगवृन्दावन, जमुनापुलिन स्याम-घनघोरी ।
बाजत बैन, रबाब, किन्नरी, कंकन, नूपुर, किंकिनि-सोरी ॥
तत-थेई, तत-थेई सबद उघटत पिय, भले बिहारि-बिहारिन जोरी ।
वरहा-मुकुट चरन-तट आवत, धरैं भुजन मैं भामिन कौं री ।
आलिंगन, चम्बन, परिरम्भन, 'परमानन्द' डारत तुन तोरी ॥

निःसन्देह ब्रजांगनाओंके साथ श्रीकृष्णकी यह लीला उनकी निष्काम स्नेहसिक्त आत्माओंका कृष्ण-रसमें आप्लावित होकर देहानुसन्धान एवं लौकिकावेशसे निर्मुक्त होकर अखण्ड आनन्दस्वरूप परमात्माके रसमें डूबना ही है। मानव देहधारियोंके जीवनका परम ध्येय भी आनन्द-प्राप्तिके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है।

‘प्रणव’ की उपासना*

(डॉ० श्री के० डी० शर्माजी)

मनुष्य योनि परमात्माकी श्रेष्ठतम कृति है। महर्षि वेदव्यासके अनुसार ‘न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्’ अर्थात् मनुष्यसे श्रेष्ठ अन्य कोई प्राणी नहीं है। मनुष्यकी श्रेष्ठता उसमें विवेक शक्ति होनेके कारण है। मनुष्यमें ईश्वरीय ज्ञा प्राप्त करनेकी सामर्थ्य है। सौभाग्यसे श्रोत्रिय (वेदज्ञ) तथा ब्रह्मनिष्ठ गुरु मिल जाय तो मनुष्य पूर्णत्व प्राप्त कर सकता है। यदि सद्गुरु नहीं मिले तो ‘कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्’ के अनुसार भगवान् श्रीकृष्णको ही गुरुरूपमें धारणकर सद्शास्त्रोंका अध्ययन करना चाहिये।

शास्त्रोंके अनुसार सर्वप्रथम यह स्वीकार करना चाहिये कि ‘परमात्मा है’। कठोपनिषद् (२।३।१३)–के अनुसार ‘वह परमात्मा है और वह साधकको प्राप्त होता है’—इस विश्वाससे उन्हें स्वीकार करे और तत्पश्चात् तात्त्विक विवेचनपूर्वक निरन्तर उनका ध्यान करते हुए उन्हें प्राप्त करना चाहिये। परमात्माको तत्त्वभावसे जाननेका तात्पर्य है श्रुति, स्मृति तथा युक्ति आदि शास्त्रोंके श्रवण, मनन और निदिध्यासनद्वारा परमात्माके तात्त्विक स्वरूपका ज्ञान प्राप्त करना। अन्तमें यह मन्त्र कहता है कि ‘इन दोनों प्रकारकी उपलब्धियाँ प्राप्त होनेपर परमात्माका वास्तविक दिव्य स्वरूप साधकको प्रत्यक्ष अनुभव हो जाता है।’ आगेके दो मन्त्रों कठोपनिषद् (२।३।१४-१५)–में कहा गया है कि ‘जिस समय हृदयमें स्थित समस्त कामनाएँ नष्ट हो जाती हैं और हृदयकी अविद्याजनित सम्पूर्ण ग्रन्थियों (‘मैं यह शरीर हूँ, यह मेरा धन है, मैं सुखी हूँ, मैं दुखी हूँ, यह मेरा परिवार है’ इत्यादि)–का नाश हो जाता है, उस समय यह मरणधर्मा मनुष्य अमर हो जाता है और इस शरीरमें ही ब्रह्मभावको प्राप्त हो जाता है।’ अन्तमें कठोपनिषद् (२।३।१५)–में नचिकेताको यमराज उपदेश देते हैं कि ‘अथ मर्त्योऽमृतो भवत्येतावद्व्यनुशासनम्’ (अथ मर्त्यः अमृतः भवति हि एतावत् अनुशासनम्)

अर्थात् भौतिक कामनाओंका त्याग कर देनेसे साधक चेतनाके उच्च स्तरपर स्थित हो जाता है तथा इस जीवनमें अमृतस्वरूप हो जाता है, निश्चित ही, इतना ही अनुशासन (उपदेश) है। उपदेशके अन्तमें अनुशासन दिया जाता है।

कठोपनिषद् (१।२।२३) तथा मुण्डकोपनिषद् (३।२।३)–में कहा गया है कि ‘परब्रह्म परमात्मा न तो प्रवचनसे, न बुद्धिसे और न ही बहुत श्रवणसे ही प्राप्त हो सकता है। यह जिसे स्वीकार कर लेता है, उसको ही प्राप्त हो सकता है तथा उसके प्रति परमात्मा अपना यथार्थ स्वरूप प्रकट कर देता है।’ परमात्माकी दिव्यानुभूति प्राप्त करनेके लिये उत्कट इच्छा, चित्तकी निर्मलता और वैराग्यभाव साधकको भगवत्कृपाका अधिकारी बना देते हैं।

मुण्डकोपनिषद् (३।२।४)–के अनुसार ‘परब्रह्म परमात्मा आत्मनिष्ठाजनित बलसे रहित, प्रमाद तथा सात्त्विक लक्षणरहित तपसे नहीं प्राप्त हो सकता, किंतु आध्यात्मिक बल, अप्रमाद तथा सात्त्विक तपसे परमात्माकी अनुभूति हो सकती है।’

केनोपनिषद् (२।५)–में कहा गया है कि ‘इस मनुष्य शरीरमें परब्रह्मको जान लिया तब तो मानव-जन्मकी सार्थकता है। यदि नहीं जान पाया तो महान् विनाश अर्थात् जन्म-मृत्युरूप प्रवाहमें बहना पड़ेगा।’ इस मन्त्रमें परमात्माको जाननेकी सरल विधि बतायी है कि सम्पूर्ण चराचर प्राणियोंमें परमात्माका साक्षात्कार करते हुए विवेकी साधक सदाके लिये जन्म-मृत्युके चक्रसे छूटकर अमर हो जाते हैं।

‘ॐ’ (ओंकार या प्रणव)–की उपासनासे परब्रह्म परमात्माकी अनुभूति—आद्यशंकराचार्यके अनुसार ‘ॐ’ यह अक्षर परमात्माका सबसे समीपवर्ती (प्रियतम) नाम है। इसका निरन्तर उच्चारण किये जानेपर परमात्मा प्रसन्न होते हैं। अतः ‘ॐ’ का जप, मनन तथा

* प्रणव (ओंकार)–की उपासना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, परंतु यह उपसना साधु-संन्यासी एवं विरक्तोंके लिये विशेष उपयोगी है। सामान्यतः इस उपासनाके अधिकारी यज्ञोपवीत धारण करनेवाले द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) ही हैं।

अत्यन्त प्रभावपूर्ण शरीरयुक्त, प्रसन्न एवं घुँघराले

मानसमें वर्णित उत्कृष्ट श्रीराम-प्रेमी

[गताङ्क ११ पृ०सं० ३४ से आगे]

(श्रीसुभाषचन्द्रजी बग्गा)

(७) जटायुजी में 'दरस प्रेम'

सीताजीका अपहरण करके ले जाते हुए रावणको गीधराज जटायुने अतुलनीय पौरुषका प्रदर्शन करते हुए चुनौती दी। लंकापति रावणने उनके पंख काट दिये। जटायुका क्षत-विक्षत शरीर धरतीपर गिर पड़ा। पीड़ाके असह्य क्षणोंमें भी उनकी एकमात्र अभिलाषा थी कि वे सीताजीका समाचार प्रभु रामको सुना सकें। जटायुजी पश्चात्ताप कर रहे हैं कि मरनेके समय भी मैं मुनिवेषधारी रामको न देख सका, अब प्रभुको सीताजीकी सुधि सुनाये बिना ही ये पामर प्राण प्रयाण करना चाहते हैं—

मरत न मैं रघुबीर बिलोके तापस बेष बनाए।
चाहत चलन प्राण पाँवर बिनु सिय-सुधि प्रभुहि सुनाए॥

(गीतावली ३।१२।३)

इस प्रकार गीधराज पछताते हैं। इसी समय जानकीजीको ढूँढ़ते हुए लखनसहित श्रीराम वहाँ



आये। प्रभुने गीधराजको गोदमें उठा लिया और अपने कर-कमलोंके स्पर्शसे उनकी पीड़ाको विनष्ट कर दिया। जटायु बोले—प्रभो! रावणने जानकीजीको हर लिया है। मैं उस दुष्टसे उन्हें न छुड़ा सका। वह विलाप करती हुई जनकनन्दिनीको दक्षिण दिशाको ले गया।

फिर गीधराजने कहा—प्रभो! आपके दर्शनोंके लिये प्राण रोक रखे थे। हे कृपानिधान! अब वे चलना चाहते हैं।

दरस लागि प्रभु राखेउँ प्राणा। चलन चहत अब कृपानिधाना॥

प्रभु श्रीराम जटायुसे जीवित रहनेका आग्रह करते हैं, जिससे वे उनकी कुछ सेवा कर सकें, पर गीधराज इस प्रस्तावको अस्वीकार कर देते हैं। अपने शरीरको श्रीरामके नयन-जलसे भीगा जानकर हँसकर बोले—रघुनाथजी! मुझे तो अपनी मृत्युके सामने चारों फल तुच्छ प्रतीत हो रहे हैं और यदि आपको मेरी बात ठीक न लगे तो बताइये।

गीधराजको अधम खगयोनि के बदले जो कुछ प्राप्त हो रहा था, उससे बड़ा लाभ क्या हो सकता था?

धर्म—परहितके लिये उनका शरीर विनष्ट हुआ, इससे बढ़कर शरीरकी सार्थकता क्या हो सकती थी; क्योंकि **'परहित सरिस धर्म नहीं भाई'।**

काम—कामके अनित्य सौन्दर्यके स्थानपर उन्हें सौन्दर्यसिन्धु प्रभु श्रीरामका रूप निहारनेका अवसर प्राप्त हो रहा था।

मोक्ष—अधम शरीरको छोड़कर वे प्रभुके मंगलमय धाममें प्रविष्ट हो रहे थे। ऐसी स्थितिमें जीवित रहकर घाटेका सौदा कैसे स्वीकार करते?

मेरे मरिबे सम न चारि फल, होहिं तौ, क्यों न कहीजै?

(गीतावली ३।१५।४)

गीधराज कहते हैं—मैं मुखसे आपका नाम ले रहा हूँ, आपके मुखारविन्दका दर्शन मुझे हो रहा है, आपके मधुर वचन मेरे श्रवणगोचर हो रहे हैं। दूसरा ऐसा कौन है, जो अपनेको मेरे समान बड़भागी बतला सके?

श्रवन बचन, मुख नाम, रूप चख, राम उछंग लियो हौं।
तुलसी मो समान बड़भागी को कहि सकै बियो हौं॥

(गीतावली ३।१४।३)

नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे। सरद बिमल बिधु बदन निहारें ॥ प्रभु श्राराममें प्रेम नहीं घटना चाहिये। [समाप्त]
Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/dharma> MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

संत-चरित—

श्रीरामकृष्ण परमहंस

(स्वामी श्रीअभेदानन्दजी महाराज)

श्रीरामकृष्ण परमहंस, एक मतसे आधुनिक भारतके संतशिरोमणि माने जाते हैं। १७ फरवरी सन् १८३६ ई० को बंगालप्रान्तान्तर्गत हुगली जिलेके 'कामारपुर' नामक एक अप्रसिद्ध गाँवमें पैदा हुए थे। इनका घरका नाम गदाधर चट्टोपाध्याय था और इनके माता-पिता ईश्वरप्रेमी, धार्मिक और उच्च आध्यात्मिक आदर्शोंसे सम्पन्न सनातनी ब्राह्मण थे।

श्रीरामकृष्णका असाधारण घटनाओंसे परिपूर्ण प्रारम्भिक जीवन जन्मस्थलीमें ही व्यतीत हुआ। चार सालकी अवस्थामें ही वह पहले-पहल समाधिस्थ हुए और दिनोंदिन उनकी यह प्रवृत्ति बलवती होती गयी। पुस्तकीय विद्यासे अरुचि होनेके कारण ग्रामीण प्राइमरी पाठशालासे उनकी शिक्षा समाप्त हो गयी, परंतु उनके अनुकरणीय चरित्र, कलानिपुणता, मधुर सुरीले स्वर, अपूर्व आनन्दमय अनुभव, अलौकिक व्यक्तित्व, असाधारण बुद्धि तथा सभी जातियों और सम्प्रदायोंके लोगोंसे निष्काम प्रेमके कारण वे आसपासके समस्त ग्राम-निवासियोंकी प्रशंसा तथा भक्तिके पात्र हो गये।

सन् १८५३ ई० में श्रीरामकृष्ण अपने सबसे बड़े भाई रामकुमार चटर्जीके साथ कलकत्ते आये और सन् १८५६ ई० में जब रानी रासमणिने इनके बड़े भाईको कलकत्तेके निकटवर्ती दक्षिणेश्वरमन्दिरका प्रधान पुजारी नियुक्त किया, तब ये उनके सहायक बन गये। रामकुमारकी मृत्युके बाद ये कई महीने वहीं बड़े भाईके स्थानपर रहे। इसी समय इनकी हिन्दूधर्मके विभिन्न अंगोंकी साधना आरम्भ हुई, जो बारह वर्षतक चलती रही। यहाँपर इन्होंने किस प्रकार तपस्या और त्यागमय जीवन व्यतीत किया, किस प्रकार तोतापुरीसे संन्यास लिया और उन्होंने इनका नाम 'रामकृष्ण परमहंस' रखा और किस प्रकार इन्होंने तान्त्रिक साधना तथा ख्रीष्ट और इस्लाम धर्मके अनुसार उन-उन धर्मोंके अनुयायियोंकी भाँति उपासना की—

इन सब बातोंका वर्णन स्थानाभावके कारण नहीं हो सकता।

बचपनसे ही श्रीरामकृष्ण सम्प्रदायिकता तथा संकुचित भावोंके विरोधी थे; किंतु साथ ही उन्होंने यह भी बताया कि सभी सम्प्रदाय और मत-मतान्तर सच्चे जिज्ञासुओंके समस्त धर्मोंके सर्वसम्मत लक्ष्यतक पहुँचानेके लिये भिन्न-भिन्न रास्ते हैं। संसारके भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों और मत-मतान्तरोंके अनुसार साधना करके उन्होंने प्रत्येक विशिष्ट धर्मके सर्वोच्च ध्येयको प्राप्त किया और साधनाद्वारा प्राप्त अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियोंका पुंज मानवजातिको दिया। उनके प्रत्येक विचार सीधे ईश्वरसे प्राप्त होते थे। उनमें मानवीय बुद्धि, संस्कार अथवा पाण्डित्यकी करामातोंका सम्मिश्रण नहीं था। जन्मसे लेकर मृत्युपर्यन्त उनका प्रत्येक कार्य असाधारण था। उनके जीवनकी प्रत्येक अवस्था किसी नये शास्त्रका एक-एक अध्याय थी, जिसे मानो पौर्वात्य और पाश्चात्य सभी लोगोंको लाभ पहुँचानेके लिये तथा बीसवीं शताब्दीकी अध्यात्म-सम्बन्धी आवश्यकताओंको पूर्ण करनेके लिये स्वयं भगवानने अपने अलक्ष्य हाथोंसे खास तौरपर लिखा था।

उनके चरित्र और उपदेश इतने अलौकिक एवं चमत्कारपूर्ण थे कि उनके १६ अगस्त १८८६ ई० को संसारसे कूच करनेके दस वर्षके भीतर ही भूतपूर्व प्रोफेसर सी० एच० टॉनीने लन्दनके 'इम्पीरियल और क्वार्टर्ली रिव्यू' के सन् १८९६ ई० के जनवरीके अंकमें 'एक आधुनिक हिन्दू संत' (श्रीरामकृष्ण) शीर्षक लेख छपवाया था। दिवंगत प्रोफेसर मैक्समूलरने भी सन् १८९६ ई० के 'नाइन्टीन्थ सेंचुरी' (उन्नीसवीं शताब्दी) नामकी अंग्रेजी पत्रिकाके अगस्त अंकमें 'A Real Mahatma' (एक वास्तविक महात्मा) शीर्षकसे महात्मा रामकृष्णके जीवनका संक्षिप्त परिचय लिखा और बाद में 'Ramkrishan: His Life and Sayings' (श्रीरामकृष्ण : उनके चरित्र और उपदेश) नामक पुस्तक लिखी।

सन् १९०३ ई० में न्यूयार्क (अमेरिका)–की वेदान्त सोसायटीने ‘Sayings of Ramkrishna’ (रामकृष्णके उपदेश) तथा सन् १९०७ ई० में इस लेखककी भूमिकासहित ‘Gospel of Ramkrishna’ (रामकृष्णका सन्देश) नामक ग्रन्थ प्रकाशित किये। इस ‘सन्देश’ का बादमें यूरोपकी स्पैनिश, पुर्तगीज, डैनिश, स्कैण्डिनेवियन और चेकोस्लेवाकी भाषामें अनुवाद हुआ।

श्रीरामकृष्णके अवतारका हेतु

उनके अवतारका हेतु अपने जीवनके द्वारा यह दिखलाना था कि किस प्रकार कोई सच्चा आत्मज्ञानी इन्द्रियके विषयोंसे बहिर्मुख होकर परमानन्दमें लीन रह सकता है। वे यह सिद्ध करनेके लिये आये थे कि प्रत्येक आत्मा अमर है और ब्रह्मत्वको प्राप्त करनेकी सामर्थ्य रखता है। विभिन्न सम्प्रदायोंके अन्तस्तलमें सैद्धान्तिक एकता दिखाकर उनमें मेल स्थापित करना ही उनके जीवनका उद्देश्य था। पहले-पहल श्रीरामकृष्णने ही यह सिद्ध करके दिखाया कि समस्त धर्म एक नित्य सत्यकी ओर ले जानेवाले विभिन्न मार्ग हैं। परमात्मा एक है, किंतु उसके अनेक रूप हैं। विभिन्न जातियाँ उनकी पूजा विभिन्न नामों और रूपोंसे करती हैं। वह साकार भी है और निराकार भी और दोनोंसे परे निर्गुण भी है। उसके नाम और रूप होनेपर भी वह बिना नाम और बिना रूपका है।

उनका ध्येय था परमात्माको विश्वका माता-पिता सिद्ध करना तथा इस प्रकार स्त्रीत्वके आदर्शको जगदम्बाके पदपर प्रतिष्ठित करना। अपनी स्त्रीको वे मानवीरूपमें जगदम्बा ही समझते थे और ‘षोडशी देवी’ कहकर उनकी पूजा करते थे। इस प्रकार इस विलासिताके युगमें भी भौतिकेतर आध्यात्मिक विवाहकी सत्यता उन्होंने प्रमाणित की। उनकी स्त्री भगवती कुमारी शारदादेवीने पवित्रता, सतीत्व और जगन्मातृत्वका आदर्श स्थापित किया और वे भी श्रीरामकृष्णको मानवीरूपमें जगदीश्वर मानकर ही उनकी भक्ति करती थीं। संसारके धार्मिक इतिहासमें इस प्रकारके आध्यात्मिक विवाहका अन्य कोई उदाहरण नहीं मिलता, अपितु

श्रीरामकृष्णने आध्यात्मिक जगत्में गुरुको स्त्रीरूपमें मानकर स्त्रीत्वके आदर्शको और भी ऊँचा बना दिया। धार्मिक इतिहासमें स्त्रीत्वको इतना सम्मान देनेवाला अन्य कोई मसीहा अथवा नेता नहीं देखा गया।

श्रीरामकृष्ण स्पर्शमात्रसे ही किसी भी पापीके चरित्रको अपनी दैवीशक्तिद्वारा पलट देते थे और उसे आध्यात्मिक जगत्में पहुँचा देते थे। वे दूसरोंके पाप अपने ऊपर ले लिया करते थे और अपनी आध्यात्मिक शक्ति उनमें डालकर तथा उन्हें ईश्वरके दर्शन कराकर उनको पवित्र कर देते थे। ऐसी अलौकिक शक्ति साधारण संतों और महात्माओंमें देखनेको नहीं मिलती।

श्रीरामकृष्ण परमहंसके उपदेश

१. वाद-विवाद न करो। जिस प्रकार तुम अपने धर्म और विश्वासपर दृढ़ रहते हो, उसी प्रकार दूसरोंको भी अपने धर्म और विश्वासपर दृढ़ रहनेका पूरा अवसर दो। केवल वाद-विवादसे तुम दूसरोंको उनकी गलती नहीं समझा सकोगे। परमात्माकी कृपा होनेपर प्रत्येक मनुष्य अपनी गलती समझेगा।

२. यह सच है कि परमात्माका वास व्याघ्रमें भी है, परंतु उसके पास जाना उचित नहीं। उसी प्रकार यह भी ठीक है कि परमात्मा दुष्टसे भी दुष्ट पुरुषमें विद्यमान है, परंतु उसका संग करना उचित नहीं।

३. पानी और उसका बुलबुला एक ही चीज है। बुलबुला पानीसे बनता है और पानीमें तैरता है तथा अन्तमें फूटकर पानीमें ही मिल जाता है; उसी प्रकार जीवात्मा और परमात्मा एक ही चीज है, भेद केवल इतना ही है कि एक छोटा होनेसे परिमित है और दूसरा अनन्त है; एक परतन्त्र है और दूसरा स्वतन्त्र है।

४. रेलगाड़ीका इंजन वेगके साथ चलकर ठिकानेपर अकेला ही नहीं पहुँचता, बल्कि अपने साथ-साथ बहुत-से डिब्बोंको भी खींच-खींचकर पहुँचा देता है। यही हाल अवतारोंका भी है। पापके बोझसे दबे हुए अनन्त मनुष्योंको वे ईश्वरके पास पहुँचा देते हैं।

मंगलमयी गोमाताकी सेवा परम कल्याणकारी है

(गोलोकवासी जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री 'श्रीजी' महाराज)

वेदोंमें गोमाताको विश्वरूपा एवं विश्ववन्द्या बतलाया गया है। अथर्ववेदके गोसूक्तमें आया है—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसाऽऽदित्यानममृतस्य नाभिः ।

प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ठ ॥

यहाँ इसे रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, आदित्योंकी बहन और अमृतकी नाभिस्वरूप कहते हुए इसे अहिंसनीया बतलाया गया है।

गोमाता विश्वकी माता हैं 'गावो विश्वस्य मातरः'। ये हमारे जीवनकी सर्वस्व निधि हैं। भारतीय पुरातन परम्परा, संस्कृति, सभ्यता, मर्यादा एवं धर्मकी प्रतीक स्वरूप हैं। भारतीय धर्मके विभिन्न रूप गोमातापर आधारित हैं। अनादि वैदिक सनातनधर्म एवं तदन्तर्गत सभी धर्मोंके कार्य गोमाताके बिना सम्पादित नहीं हो सकते। ये हमारी परम पूज्या, परम वन्दनीया, परमाराध्या हैं। ये परम दिव्य अमृतको प्रदान करनेवाली हैं, यही हमारे पोषणकी एकमात्र आधारशिला हैं। इनके दूध, दही, नवनीत, घृत, मल, मूत्रादि सभी हमें बलिष्ठ, ओजसम्पन्न, कान्तिमान्, पवित्र, स्वस्थ, सद्बुद्धिमान् बनानेवाले हैं। इनके आश्रयसे मानवमात्र इहलौकिक एवं पारलौकिक दिव्यानन्दकी अनवरत कामना करते हैं तथा देशपर आनेवाले भीषण संकटोंका परिहार भी इन्हींके बलपर करनेमें पूर्ण समर्थ होते हैं। हमारे वेद, स्मृति, पुराणादि सकल शास्त्रोंमें इनकी महिमा, इनके महत्त्वका पद-पदपर वर्णन है। ये केवल अवध्या ही नहीं अपितु परम वन्दनीया, प्रातःस्मरणीया हैं। निखिलजन-हितकारिणी, परम पवित्रा, मंगलदायिनी एवं विविध पातकविनाशिनी हैं।

गो हमारे आचार, पवित्रता और आरोग्यकी आधाररूपा है। गोवंशकी श्रमशक्तिद्वारा पृथ्वीसे अन्नादिकी विपुल उत्पत्ति होती है, गोमयसे यज्ञभूमि, गृहस्थोंका आँगन और वानप्रस्थियोंकी कुटिया पवित्र होती है। गोघृतद्वारा यज्ञादिदेवोंकी तृप्ति होती है, गोदुग्ध मनुष्यके लिये तेज, बल, वृद्धि और स्फूर्तिदायक है। गोमय, गोदुग्ध तथा गोघृतकी उपयोगिता तो है ही, साथ ही सवत्सा गायके दानसे मनुष्य सहज ही वैतरणी नदीको पार करनेका अवसर प्राप्त कर लेता है। ब्रह्माण्डपुराण, पद्मपुराण, स्कन्दपुराण, भविष्यपुराण आदि अनेक पुराणोंमें गोमाताको शक्तिरूपमें निरूपित किया गया

है। यहाँतक कि परम परात्पर परब्रह्म भगवान् श्रीकृष्णने अपना समस्त बाल्यकाल गोसेवामें ही व्यतीत कर दिया था तथा भगवान् श्रीरामके पूर्वज सम्राट् दिलीप इसी गोरक्षावे हित अपने प्राणोंतकका उत्सर्ग करनेको तत्पर हो गये।

ऐसी महिमामयी गोमाता आज अकालग्रस्त क्षेत्रोंमें अत्यन्त शोचनीय अवस्थामें अपना जीवनयापन कर रही हैं। गोकुली महिमासे अज्ञात व्यक्ति अकालग्रस्त क्षेत्रोंमें आज भूखसे व्याकुल गोमाताको त्याग रहे हैं और भैंसोंका पालन-पोषण कर रहे हैं, यह कैसी विडम्बना एवं खेदास्पद स्थिति है! सम्भवतः भूख और कष्टसे जर्जर गोविन्दकी गायके क्रन्दनको हम सुन नहीं पा रहे हैं। वैदिक संस्कृतिकी पोषक, जिसका दर्शन पुण्यास्पद है, जो कष्टसहिष्णु है, उसके प्रति ऐसी उपेक्षा चिन्तनीय है। गोदुग्धकी महिमाका बखान तो हम करते हैं, पर वह गोसंरक्षणके बिना कैसे सम्भव होगा? सम्प्रति आज आवश्यकता है गोसंरक्षणकी। राष्ट्रकी समृद्धिदायिनी गाय विवश हो आज अपने अश्वपूर्ण नेत्रोंसे हमारी ओर निहार रही है। ऐसे समयमें गोमाताकी रक्षा करना प्रत्येक भारतवासीका धार्मिक एवं नैतिक कर्तव्य है। यह एक महान् यज्ञ है, जिसमें सभीको सक्रिय सहयोग देना है। जिनकी गोमाताके प्रति श्रद्धा-निष्ठा है, वे इस व्रतको ग्रहण करेंगे तभी यह सफल हो सकेगा।

गोमाताका महत्त्व धार्मिक, आर्थिक, राष्ट्रोन्नति आदि जिस दृष्टिसे भी देखा जाय परम कल्याणकारी है। इसकी आराधनासे, इसके सेवा-कैक्यसे पुरुषार्थचतुष्टयकी उपलब्धि होती है। जिस देशमें गोरक्षण, गोसेवा होती है, वह कभी भी संक्रामक रोगसे, अर्थाभाव, अशान्ति एवं असुखसे नानाप्रकारके महातंकसे आक्रान्त नहीं होता। यथार्थतः देखा जाय तो गोमाताके बिना जीवन जीवन नहीं है, केवल असुरता है।

अपना कल्याण चाहनेवाले गृहस्थोंको अपनी सम्पूर्ण शक्तियोंसे गोसेवा करना परम इष्ट है। यह सेवासे शीघ्र ही धन, सम्पत्ति, आरोग्य आदि सुखकर साधन सुलभ करा देती है। परम पवित्र सात्त्विक सर्वोपकारी धेनु सर्वथा अर्चनीय, वन्दनीय और अवध्य है। यह सर्वदेवमयी है, परम हितैषिणी और परमात्माकी मांगलिक शक्ति है।

साधनोपयोगी पत्र

(१)

वैराग्य और भजन कैसे हो ?

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका एक पत्र पहले मिला था। कुछ दिन बाद दूसरा भी मिला। पहले पत्रका जवाब नहीं दिया जा सका, इसके लिये किसी प्रकारका विचार नहीं करना चाहिये। आप मेरे पत्रकी प्रतीक्षा करते रहते हैं, यह आपके बड़े प्रेमकी बात है। इतना प्रेम करनेवाले प्रेमियोंको मैं समयपर उनके पत्रका उत्तर भी नहीं लिख पाता, इस अपराधसे छूटनेके लिये भी प्रेमियोंके प्रेमका ही भरोसा है। अपनी शक्तिसे तो कुछ होता नहीं दीखता। प्रेमके सामने कोई शक्ति कुछ काम भी नहीं करती। 'हर समय वैराग्य बना रहे तथा भगवान्का स्मरण होता रहे'—इस तरहकी आपकी अभिलाषा बहुत ही सराहनीय है। जगत्की अनित्यता, दुःखरूपता और भयानकताका अच्छी तरह ज्ञान होनेके बाद जगत्के पदार्थोंमें आसक्ति नहीं रहती। जबतक इनमें नित्यता, सुख और रमणीयता भासती है तभीतक इनमें राग है। इसके लिये बार-बार संसारके भोगोंमें जन्म-मृत्यु-जरा-व्याधिरूप दुःख-दोष देखना चाहिये तथा सत्संग, विचार और विवेकके द्वारा रमणीयता, सुख और नित्यताका बाध करना चाहिये। वास्तवमें ये सब विषय जिस रूपमें दीखते हैं, उस रूपमें हैं ही नहीं। हमें अपनी मोहाच्छादित दृष्टिके कारण ही इनका स्वरूप यथार्थ नहीं दीखता, इसीसे इनमें फँसावट हो रही है। जहरसे भरे हुए नकली सोनेके घड़ेके समान, अथवा सुगन्धित इत्र आदि वस्तुओंसे ढकी हुई विष्ठाके समान, अथवा सोनेकी खोलीसे मढ़े हुए जहरीले सर्पके समान, अथवा राखसे ढकी हुई प्रबल अग्निके समान संसारके विषय बार-बार मृत्यु देनेवाले, घृणित, जहरीले तथा जलानेवाले हैं। इस प्रकार समझकर—तथा इसकी परिवर्तनशीलता, क्षणभंगुरता, दृष्टिभेदसे अनुकूल एवं प्रतिकूलरूपता, वियोगशीलता, मृत्युमयता आदिपर विचार करके इनसे मन हटाना चाहिये। इनका रूप जब ठीक-ठीक समझमें आ जायगा तब इनमेंसे राग निकलकर आप ही इस

वैराग्य हो जायगा। फिर जिस प्रकार हम जान-बूझकर अफीम नहीं खाते, अग्निमें हाथ नहीं डालते, साँपको हाथमें नहीं लेते, विष्ठाको नहीं छूते—इसी प्रकार विषयोंसे अलग हो जायँगे। इनमें प्रीति होना तथा उन्हें ग्रहण करना तो अलग रहा—इनका चिन्तन भी हमें नहीं सुहावेगा। विषयोंकी चर्चा भी खारी लगने लगेगी।

इस प्रकार भगवान्का स्मरण न होनेमें भी प्रधान कारण भगवान्के यथार्थ तत्त्व, प्रभाव, रहस्य, महिमा और गुणोंके ज्ञानका अभाव ही है। श्रीभगवान्के एक भी गुणका रहस्य, एक भी नामकी महिमा, एक भी चरित्रका प्रभाव, एक भी शक्तिका तत्त्व जान लिया जाय अथवा एक भी रूपकी जरा-सी भी झाँकीका ज्ञान भी हो जाय तो फिर भगवान्से क्षणभरके लिये भी चित्त न हटे। फिर विषयोंमें दुःख-दोष देखकर उनसे चित्त हटानेकी आवश्यकता नहीं रहती, अपने-आप ही विषयोंमें आसक्ति नष्ट हो जाती है। जिस प्रकार सूर्य भगवान्के उदय होनेपर दीपककी ओर कोई आकर्षण नहीं रहता, इसी प्रकार भगवान्की जरा भी झाँकी होनेके बाद विषयोंका सब रस फीका हो जाता है। असल बात तो यह है कि फिर उसकी तात्त्विक दृष्टिमें विषयोंका अस्तित्व ही नहीं रहता। एकमात्र सच्चिदानन्दघन भगवान्की ही अखण्ड, अचल, सनातन, अज, अविनाशी, सर्वव्यापिनी सत्ता रह जाती है। उसे फिर आनन्दघन परमात्माके सिवा और कुछ नहीं भासता। इस अवस्थामें उससे परमात्माका असली भजन अपने-आप ही होने लगता है। वास्तवमें सूर्य और दीपकके उदाहरणकी तुलना परमात्माके ज्ञान और विषयोंके साथ नहीं हो सकती, तथापि समझनेके लिये उदाहरण दिया जाता है।

संसारके विषयोंका स्वरूप तथा परमात्माकी महिमाको यथार्थ रूपसे जाननेके लिये सत्संग तथा भजन ही प्रधान साधन हैं। वैराग्यवान् सच्चे विरक्त, अनन्य भगवत्प्रेमी और सम्यग्दर्शी ज्ञानियोंके सत्संगसे विषयोंकी तथा भगवान्की स्वरूप-स्थिति सुनने-जाननेमें आती है। फिर भजन करनेसे मेलका नाश होनेपर सुना तथा जाना हुई

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१८, सूर्य दक्षिणायन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, माघ कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
द्वितीया रात्रिमें ४।६ बजेतक	बुध	पुनर्वसु दिनमें ११।३२ बजेतक	३ जनवरी	×
तृतीया " २।१ बजेतक	गुरु	पुष्य " १०।० बजेतक	४ "	×
चतुर्थी " १२।९ बजेतक	शुक्र	आश्लेषा " ८।३८ बजेतक	५ "	×
पंचमी " १०।३७ बजेतक	शनि	मघा प्रातः ७।३१ बजेतक	६ "	भद्रा दिनमें ३।३ बजेसे रात्रिमें २।१ बजेतक, मूल दिनमें १०।० बजेसे।
षष्ठी " ९।२९ बजेतक	रवि	पूर्वाषाढा " ६।४७ बजेतक	७ "	सिंहराशि दिनमें ८।३८ बजेसे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९।३ बजे।
सप्तमी " ८।४७ बजेतक	सोम	हस्त रात्रिशेष ६।२९ बजेतक	८ "	मूल प्रातः ७।३१ बजेतक।
अष्टमी " ८।३३ बजेतक	मंगल	चित्रा अहोरात्र	९ "	भद्रा रात्रिमें ९।२९ बजेसे, कन्याराशि दिनमें १२।४९ बजेसे।
नवमी " ८।५० बजेतक	बुध	चित्रा प्रातः ७।३ बजेतक	१० "	भद्रा दिनमें ९।८ बजेतक। श्रीरामानन्दाचार्य जयन्ती।
दशमी " ९।४२ बजेतक	गुरु	स्वाती दिनमें ८।९ बजेतक	११ "	तुलाराशि रात्रिमें ६।४७ बजेसे।
एकादशी " ११।० बजेतक	शुक्र	विशाखा " ९।४२ बजेतक	१२ "	×
द्वादशी " १२।४२ बजेतक	शनि	अनुराधा " ११।४२ बजेतक	१३ "	×
त्रयोदशी " २।४३ बजेतक	रवि	ज्येष्ठा " २।३ बजेतक	१४ "	×
चतुर्दशी रात्रिशेष ५।१४ बजेतक	सोम	मूल सायं ४।३६ बजेतक	१५ "	भद्रा दिनमें ९।१६ बजेसे रात्रिमें ९।४२ बजेतक, वृश्चिकराशि रात्रिमें ३।१९ बजे, उषांका सूर्य दिनमें १।४७ बजे।
अमावस्या अहोरात्र	मंगल	पूर्वाषाढा रात्रिमें ७।१४ बजेतक	१६ "	षट्तिला एकादशीव्रत (सबका)।
अमावस्या प्रातः ७।२ बजेतक	बुध	उषा " ९।४४ बजेतक	१७ "	तिलद्वादशी, मूल दिनमें ११।४२ बजेसे।
				भद्रा रात्रिमें २।४३ बजेसे, धनुराशि दिनमें २।३ बजेसे, प्रदोषव्रत, मकर-संक्रान्ति रात्रिमें ८।० बजे, खरमास समाप्त, उत्तरायण प्रारम्भ, शिशिर-ऋतु प्रारम्भ।
				खिचड़ी, भद्रा दिनमें ३।५८ बजेतक, मूल सायं ४।३६ बजेतक।
				मकरराशि रात्रिमें १।५२ बजेसे, मौनी अमावस्या, श्राद्धकी अमावस्या।
				अमावस्या।

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१८, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, माघ शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
प्रतिपदा दिनमें ८।५८ बजेतक	गुरु	श्रवण रात्रिमें ११।५९ बजेतक	१८जनवरी	चन्द्रदर्शन।
द्वितीया " १०।३५ बजेतक	शुक्र	धनिष्ठा " १।५१ बजेतक	१९ "	कुम्भराशि दिनमें १२।५४ बजेसे, पंचकारम्भ दिनमें १२।५४ बजे।
तृतीया " ११।४४ बजेतक	शनि	शतभिषा " ३।१६ बजेतक	२० "	भद्रा रात्रिमें १२।६ बजेसे, सायन कुम्भका सूर्य दिनमें ३।२३ बजे।
चतुर्थी " १२।२८ बजेतक	रवि	पू० भा० " ४।१२ बजेतक	२१ "	भद्रा दिनमें १२।२८ बजेतक, मीनराशि रात्रिमें ९।५२ बजेसे, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।
पंचमी " १२।३८ बजेतक	सोम	उ० भा० " ४।३५ बजेतक	२२ "	वसन्तपंचमी, मूल रात्रिमें ४।३५ बजेसे।
षष्ठी " १२।१८ बजेतक	मंगल	रेवती " ४।३१ बजेतक	२३ "	मेषराशि रात्रिमें ४।३१ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रिमें ४।३१ बजे।
सप्तमी " ११।२७ बजेतक	बुध	अश्विनी " ४।० बजेतक	२४ "	भद्रा दिनमें ११।२७ बजेसे रात्रिमें १०।५० बजेतक, अचलासप्तमी, रथसप्तमी।
अष्टमी " १०।१२ बजेतक	गुरु	भरणी " ३।१० बजेतक	२५ "	अभिजितका सूर्य दिनमें १०।३३ बजे।
नवमी " ८।३५ बजेतक	शुक्र	कृत्तिका " १।५७ बजेतक	२६ "	वृषराशि दिनमें ८।५० बजे, गणतंत्रदिवस।
दशमी प्रातः ६।४० बजेतक	शनि	रोहिणी " १२।३२ बजेतक	२७ "	भद्रा सायं ५।३६ बजेसे रात्रिमें ४।३२ बजेतक, जया एकादशीव्रत (स्मार्त)।
द्वादशी रात्रिमें २।१३ बजेतक	रवि	मृगशिरा " १०।५६ बजेतक	२८ "	मिथुनराशि दिनमें ११।४३ बजेसे, एकादशीव्रत (वैष्णव)।
त्रयोदशी " ११।५२ बजेतक	सोम	आर्द्रा " ९।१६ बजेतक	२९ "	सोमप्रदोशव्रत।
चतुर्दशी " ९।३१ बजेतक	मंगल	पुनर्वसु " ७।३५ बजेतक	३० "	भद्रा रात्रिमें ९।३१ बजेसे, कर्कराशि दिनमें २।० बजेसे।
पूर्णिमा " ७।१५ बजेतक	बुध	पुष्य " ६।० बजेतक	३१ "	भद्रा दिनमें ८।२२ बजेतक, माघी पूर्णिमा, माघ स्नान समाप्त, मूल सायं ६।० बजेसे, चन्द्रग्रहण—सायं ५।१८ से रात्रिमें ८।४१ बजेतक।

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१८, सूर्य उत्तरायण, शिशिर ऋतु, फाल्गुन कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
प्रतिपदा सायं ५।१० बजेतक	गुरु	आश्लेषा सायं ४।३६ बजेतक	१ फरवरी	सिंहराशि सायं ४।३६ बजेसे।
द्वितीया दिनमें ३।१९ बजेतक	शुक्र	मघा दिनमें ३।२५ बजेतक	२ "	भद्रा रात्रिमें २।३४ बजेसे, मूल दिनमें ३।२५ बजेतक।
तृतीया " १।५० बजेतक	शनि	पू०फा० " २।३७ बजेतक	३ "	भद्रा दिनमें १।५० बजेतक, कन्याराशि रात्रिमें ८।३० बजेसे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थी, चन्द्रोदय रात्रिमें ८।४६ बजे।
चतुर्थी " १२।४२ बजेतक	रवि	उ०फा० " २।८ बजेतक	४ "	शुक्रोदय रात्रिशेष ५।४४ बजे।
पंचमी " १२।१ बजेतक	सोम	हस्त " २।६ बजेतक	५ "	× × ×
षष्ठी " ११।५० बजेतक	मंगल	चित्रा " २।३३ बजेतक	६ "	भद्रा दिनमें ११।५० बजेसे रात्रिमें १२।० बजेतक, तुलाराशि रात्रिमें २।१९ बजेसे, धनिष्ठाका सूर्य सायं ५।८ बजे।
सप्तमी " १२।९ बजेतक	बुध	स्वाती " ३।३१ बजेतक	७ "	अष्टकाश्राद्ध (अपराह्नमें)।
अष्टमी " १।३ बजेतक	गुरु	विशाखा सायं ५।२ बजेतक	८ "	वृश्चिकराशि दिनमें १०।३९ बजेसे, श्रीजानकी-जयन्ती।
नवमी " २।२१ बजेतक	शुक्र	अनुराधा रात्रिमें ६।५४ बजेतक	९ "	भद्रा रात्रिमें ३।१४ बजेसे, मूल रात्रिमें ६।५४ बजेसे।
दशमी सायं ४।५ बजेतक	शनि	ज्येष्ठा " ९।१० बजेतक	१० "	भद्रा सायं ४।५ बजेतक, धनुराशि रात्रिमें ९।१० बजेसे।
एकादशी रात्रिमें ६।५ बजेतक	रवि	मूल " ११।४३ बजेतक	११ "	विजया एकादशीव्रत (सबका), मूल रात्रिमें ११।४३ बजेतक।
द्वादशी " ८।१५ बजेतक	सोम	पू०षा० " २।२० बजेतक	१२ "	× × ×
त्रयोदशी " १०।२२ बजेतक	मंगल	उ०षा० रात्रिमें ४।५२ बजेतक	१३ "	भद्रा रात्रिमें १०।२२ बजेसे, मकरराशि दिनमें ८।५७ बजेसे, भौमप्रदोषव्रत
चतुर्दशी " १२।१७ बजेतक	बुध	श्रवण अहोरात्र	१४ "	कुम्भसंक्रान्ति प्रातः ६।४४ बजे, महाशिवरात्रिव्रत।
अमावस्या " १।५२ बजेतक	गुरु	श्रवण प्रातः ७।११ बजेतक	१५ "	भद्रा दिनमें ११।२० बजेतक।
				कुम्भराशि दिनमें ८।१० बजेसे, पंचकारम्भ दिनमें ८।१० बजे, अमावस्या।

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१८, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिमें २।५८ बजेतक	शुक्र	धनिष्ठा दिनमें ९।८ बजेतक	१६ फरवरी	×
द्वितीया " ३।३७ बजेतक	शनि	शतभिषा " १०।४१ बजेतक	१७ "	×
तृतीया " ३।४३ बजेतक	रवि	पू० भा० " ११।४३ बजेतक	१८ "	×
चतुर्थी " ३।१८ बजेतक	सोम	उ० भा० " १२।१३ बजेतक	१९ "	
पंचमी " २।२५ बजेतक	मंगल	रेवती " १२।१५ बजेतक	२० "	मीनराशि रात्रिशेष ५।२८ बजेसे।
षष्ठी " १।७ बजेतक	बुध	अश्विनी " ११।५१ बजेतक	२१ "	सायन मीनका सूर्य रात्रिमें ३।६ बजे।
सप्तमी " ११।२७ बजेतक	गुरु	भरणी " ११।४ बजेतक	२२ "	भद्रा दिनमें ३।३० बजेसे रात्रिमें ३।१८ बजेतक, वैनायकी
अष्टमी " ९।२९ बजेतक	शुक्र	कृत्तिका " ९।५६ बजेतक	२३ "	श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, शतभिषाका सूर्य रात्रिमें ८।४६ बजे, मूल दिनमें
नवमी " ७।२३ बजेतक	शनि	रोहिणी " ८।३३ बजेतक	२४ "	१२।१३ बजेसे।
दशमी सायं ४।५९ बजेतक	रवि	मृगशिरा प्रातः ६।५९ बजेतक	२५ "	मेघराशि दिनमें १२।१५ बजेसे, पंचक समाप्त दिनमें १२।१५ बजे।
एकादशी दिनमें २।३५ बजेतक	सोम	पुनर्वसु रात्रिमें ३।४० बजेतक	२६ "	मूल दिनमें ११।५१ बजेतक।
द्वादशी " १२।१३ बजेतक	मंगल	पुष्य " २।३ बजेतक	२७ "	भद्रा रात्रिमें ११।२७ बजेसे, वृषराशि सायं ४।४६ बजेसे।
त्रयोदशी " ९।५८ बजेतक	बुध	आश्लेषा " १२।३७ बजेतक	२८ "	भद्रा दिनमें १०।२७ बजेतक, होलाष्टारम्भ।
चतुर्दशी प्रातः ७।५३ बजेतक	गुरु	मघा " ११।२३ बजेतक	१ मार्च	मिथुनराशि रात्रिमें ७।४७ बजेसे।
				भद्रा रात्रिमें ३।४७ बजेसे।
				भद्रा दिनमें २।३५ बजेतक, कर्कराशि रात्रिमें १०।५ बजेसे, आमलकी
				एकादशीव्रत (सबका)
				भौमप्रदोषव्रत, मूल रात्रिमें २।३ बजेसे।
				सिंहराशि रात्रिमें १२।३६ बजेसे।
				भद्रा प्रातः ७।५३ बजेसे रात्रिमें ६।५८ बजेतक, मूल रात्रिमें ११।२३
				बजेतक, पूर्णिमा, होलिकादाह भद्रा (रात्रिमें ६।५८)-के बाद।

कृपानुभूति

भगवत्कृपाकी प्रत्यक्ष अनुभूति

घटना २९ जुलाई २०१४ ई०की है—वह भयावह हादसा आज भी हमारी आँखोंके सामने चलचित्र-सा चलायमान रहता है, जो हमारे घनिष्ठ परिचित श्रीराजकुमारजीके सुपुत्र शैलेष तथा उनके परिवारके साथ हुआ। घटना इस प्रकार है—

ऊटीसे कुछ जोड़े तीन कारोंमें सवार होकर शाम सात बजे अपने निवास-स्थानसे कालीकट (केरल)-की ओर निकले। रात दस बजेके करीब पीछेवाली गाड़ीने आगेवाली गाड़ीको सूचित किया कि दो मोड़ निकल जानेके बाद भी बीचवाली गाड़ी दिखायी नहीं दे रही है। अतः सबलोग वहींपर रुककर किसी अनहोनीकी आशंकासे अत्यन्त चिन्तित स्थितिमें उनकी खोज करने लगे। कालीकट कोई ५० से ६० किलोमीटर दूर ही रह गया था। स्थानीय पुलिसको भी सूचित किया गया, सभी थककर हार गये, परंतु कारका कहीं पता नहीं चल पाया। कुछ राह-चलते राहगीरोंने मदद की तथा उनकी सूझ-बूझसे एक जगह कारके पहियोंके निशान दिखायी दिये और कारका पता चला। कार रक्षक-पट्टीके बीचमेंसे तीन पलटी खाकर २०० फिट नीचे खाईमें पेड़ोंमें उलझी हुई थी।

इस समय १२:३० बज चुके थे। वहाँ बहते झरनेके कारण आवाजका आदान-प्रदान नहीं हो पा रहा था अर्थात् न कारमें फँसे लोगोंको हमारी आवाज सुनायी दे रही थी और न हमारी आवाज उन लोगोंतक पहुँच रही थी। आखिर उन्होंने गाड़ीके बोनटपर लकड़ीसे पीटना आरम्भ किया। उस ध्वनिसे आकर्षित होकर ही उनका पता चल पाया कि वे लोग वहाँ हैं। उनके

मोबाइल बन्द हो चुके थे, जहाँ यह हादसा हुआ वह स्थान भयंकर विषधर सर्पोंकी निवास-स्थली थी तथा बरसातके कारण जोंकें भी बहुत फैली हुई थीं।

रोंगटे खड़े कर देनेवाला दृश्य था! आखिर साहस करके सात-आठ लोग नीचे उतरे। शैलेष, उनकी पत्नी तथा दोनों पुत्रियोंको ऊपर लेकर आये, तबतक रातके २:३० बज चुके थे।

जो लोग उनको ऊपर लानेमें सहायता कर रहे थे। उन्होंने बतलाया कि हमें जरा भी किसीमें वजनकी अनुभूति नहीं हुई (हालाँकि शैलेष शरीरसे कुछ भारी ही थे)। ऐसा लग रहा था कि कोई अदृश्य शक्ति उन्हें ऊपर लानेमें हमारी मदद कर रही है।

यहाँ आपको बता दें कि यह हादसा सावनमें हुआ था और पिछले ११ सावनसे शैलेषके पिता श्रीराजकुमारजीके यहाँ अखण्ड रामायणका पाठ होता है। उन सबको ईश-कृपाकी प्रत्यक्ष अनुभूति हो रही थी। शैलेषकी छातीकी तीन पसलियाँ चटक गयी थीं तथा उनकी पत्नीके बायीं तरफ गाल, नाक, कूल्हे एवं पाँवमें पाँच जगह फ्रैक्चर थे। दोनों बच्चियाँ सुरक्षित थीं, उन्हें खरोंचतक नहीं आयी थी। फिर उन्हें सीधे हॉस्पिटल ही ले गये।

जिन लोगोंने उन्हें बचानेमें मदद की, उन्हें विभिन्न संस्थाओं और तथा समाजकी ओरसे सम्मानित किया गया एवं कालीकटकी पुलिसने भी उन्हें बहादुरीका अवार्ड दिया। भगवत्कृपासे उनका परिवार आज सुरक्षित है, परंतु इस घटनासे मुझे पूरा विश्वास हो गया कि परमात्माका स्मरण हमें बड़ी-बड़ी विपत्तियोंसे बचा लेता है।—स्नेहलता मालपानी

चरन-कमल बंदों हरि-राइ

चरन-कमल बंदों हरि-राइ।

जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधे कौं सब कछु दरसाइ॥

बहिरौ सुनै, गूँग पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र थराइ।

सूरदास स्वामी करुनामय, बार बार बंदों तिहिं पाइ॥

अगले दिन मैं पर्चा लेकर चश्मेकी दूकानपर गया और कहा कि चश्मा २० रुपयेमें बना दीजिये, दूकानदारने साफ मना कर दिया। दूसरे दिन मैंने पुनः जाकर चश्मेवालेसे कहा कि मैं शेष ५ रुपये घरसे पैसा आनेपर या ट्यूशनका पैसा मिलनेपर दे दूँगा। मेरे इस तरह आग्रह करने और मनुहार करनेपर चश्मेवाला बोला, 'वह महिला आपकी कौन है?' तब मैंने पूरी बात बतायी और कहा कि मैं मानवताके नाते उसकी मदद

बस गये थे, सो हम राजस्थानीके बजाय कन्नड़ अधिक हैं। पिताजी सार्वजनिक क्षेत्रके उपक्रम भारत इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेडमें एक अधिकारी थे, घरका माहौल पढ़ने-लिखनेवाला था। पाँच भाइयोंमें मैं सबसे छोटा था, सो मुझपर कोई खास जिम्मेदारी नहीं थी। सिर्फ पढ़ाई करनी थी और करियर बनाना था। स्कूली पढ़ाईके बाद बंगलूरूके एक कॉलेजसे मैंने मेकेनिकल इंजीनियरिंगकी पढ़ाई की और फिर एम०बी०ए० भी कर लिया। इसके बाद २००१ ई० में मुझे डेल कम्पनीमें नौकरी भी मिल गयी। ठीक-ठाक पैसे मिल रहे थे। किसी चीजकी कमी नहीं थी, मगर मनमें कुछ उथल-पुथल थी। करीब सात साल डेलमें नौकरी करनेके बाद मैंने २००७ ई० में अमेरिकी दिग्गज कम्पनी अमेरिकन ऑन लाइन (ए०ओ०एल०) ज्वाइन कर ली, मुझे और ज्यादा पैसे मिलने लगे। मगर यह नौकरी भी मुझे रास नहीं आ रही थी। इस बीच २००८ ई० की मन्दीके दौरान आईटी जगत्में अफरा-तफरी मचा दी। एक दिन एक कम्पनीमें काम करनेवाली मेरे एक मित्रका फोन आया कि उसकी कम्पनी एक झटकेमें करीब छह हजार कर्मचारियोंको बाहरका रास्ता दिखा रही है। हालाँकि इस सूचीमें उसका नाम नहीं था। इसके बावजूद आईटी उद्योगकी इस अफरा-तफरीने उसे बेचैन कर दिया। नौकरीकी अनिश्चितता, ऊपरसे शहरी जीवनकी भाग-दौड़ने मेरे जैसे अनेक लोगोंको परेशान कर दिया। हालाँकि मेरी नौकरी बहुत सुरक्षित थी, पर हमारे आस-पास जो घट रहा था, वह कुछ और सोचनेको मजबूर कर रहा था। वैसे भी मुझे प्रकृतिके नजदीक रहना अधिक पसन्द था। मैं अक्सर सप्ताहान्तमें शहरसे दूर एकान्त क्षेत्रमें चला जाता था और वहाँ वक्त बिताता था। आखिरकार २००९ ई० में एक दिन मैंने ए०ओ०एल० को हमेशाके लिये अलविदा कह दिया। तब मेरी उम्र ३३ वर्षके

करीब थी। नौकरी छोड़नेका फैसला करते समय मेरे दिमागमें खेती और डेयरीका ख्याल आया। हालाँकि मुझे इसका कोई अनुभव नहीं था। मैंने तीन गायें खरीदीं और फिर बंगलूरुसे चालीस किलोमीटर दूर दोद्दबलपुर गाँवमें स्थित तीन एकड़ खेतीकी पैतृक जमीनपर अपनी डेयरी शुरू कर दी। शुरूआती महीनोंमें इससे होनेवाली आय डेल या ए०ओ०एल०—में मुझे मिलनेवाले वेतनकी तुलनामें कुछ भी नहीं थी। मगर मेरे लिये सन्तोषकी बात थी कि मैं अपना काम कर रहा था, बेवजहके तनाव और भागदौड़से मुक्त हो गया था। इसी बीच २०१२ ई० और २०१३ ई०— लगातार दो वर्षोंमें पड़े सूखेसे मुझे काफी धक्का लगा। तबतक मेरे साथ कुछ और लोग जुड़ गये थे। मगर हम मुश्किलसे मवेशियोंका खर्च उठा पा रहे थे। हमारे पास लिक्विड मनी नहीं थी। हमने अपना बिजनेस मॉडल बदलनेके बारेमें विचार किया। हमने जब इधर-उधर कुछ खँगालना शुरू किया, तो पता चला कि डेयरी फार्मिंगका मतलब सिर्फ दूध बेचना नहीं है। इसमें चारा बेचनेसे लेकर दूधकी ट्रांसपोर्टिंग और मवेशियोंकी दवाई बेचनेसे लेकर गायकी ब्रीडिंग (पालन-पोषण) भी शामिल है। इसके बाद हमने गाय की ब्रीडिंगका काम शुरू कर दिया। इसके लिये हम तीन माहसे छः माहकी बछिया खरीदते हैं, फिर उसे डेढ़ वर्षतक पालते हैं और जब वह दूध देनेलायक गाय बन जाती है तो उसे बेच देते हैं। एक बारमें हमारे पास करीब १२० बछिया होती हैं। मैंने अर्बन डेयरी फार्मर नामसे एक मार्गदर्शिका भी तैयार की है, जिसके जरिये कोई भी नौकरी करते हुए भी डेयरी शुरू कर सकता है। अबतक मैं पंचानबे कार्यशालाएँ आयोजितकर ६०० पेशेवरोंको प्रशिक्षित कर चुका हूँ।

(३)

जयप्रकाश बाबूकी परदुःखकातरता

लोकनायक जयप्रकाशजी मेरे पिताजीके बड़े आत्मीय थे। जिन दिनों पिताजी जसलोक अस्पतालमें किडनीकी चिकित्सा (डाइलेसिस)—हेतु एडमिट थे, उन्हीं दिनों बाबू जयप्रकाश नारायणकी किडनी भी अचानक चण्डीगढ़में खराब हो गयी। उन्हें भी जसलोक अस्पतालमें डॉ० मणीकी चिकित्सामें दाखिल किया गया। वैसे उन दिनों किडनीकी चिकित्सा तो केवल डाइलेसिस ही थी।

एक दिन पिताजीने व्हील चेयरकी माँग की और कहा—मैं जयप्रकाश बाबूसे मिलने जाऊँगा। मुझसे बोले कि तुम्हारे पास रुपया हो तो मुझे दो। जयप्रकाश बाबूका कमरा भी उसी फ्लोरपर था, जहाँ पिताजीका कमरा था। पिताजीको वहाँ पहुँचाकर मैं वापस आ गया। दोनों साथी करीब एक घण्टा साथ रहे और पुराने दिनोंकी यादें ताजा करते रहे। इस बीच जयप्रकाश बाबूका डाइलेसिसपर जानेका समय हो गया। पिताजीने उन्हें रुपयेका लिफाफा थमाया। जयप्रकाश बाबू बोल पड़े—रामेश्वरजी! मुझे आज पैसेकी बड़ी आवश्यकता थी। जनताके विलक्षण नेता जयप्रकाशकी यह स्थिति थी। जिसके इशारेपर सत्ता पलट गयी। उसके ये वाक्य! तत्पश्चात् अपने सचिव अब्राहमसे बोले कि ‘अब्राहम! बाहर जो बाई बैठी है, उसे ये रुपये दे आओ। उसके पतिकी डाइलेसिस पैसों बिना रुकी हुई है।’

जयप्रकाश बाबूकी पिताजीसे यह अन्तिम मुलाकात थी। उस समय डायलेसिस अत्यन्त कष्टदायी चिकित्सा-प्रणाली थी, उस भयंकर पीड़ाके बीच भी उन्हें दूसरेकी पीड़ा ही अधिक पीड़ित करती थी। लोककी पीड़ाके प्रति इसी संवेदनशीलता और परदुःखकातरताने उन्हें लोकनायक बना दिया।—नन्दलाल टांटिया

मनन करने योग्य

इन्द्रिय-संयम

मथुराकी सर्वश्रेष्ठ नर्तकी, सौन्दर्यकी मूर्ति वासवदत्ताकी दृष्टि अपने वातायनसे राजपथपर पड़ी और जैसे वहीं रुक गयी। पीत-चीवर ओढ़े, भिक्षापात्र लिये एक मुण्डितमस्तक युवा भिक्षु नगरमें आ रहा था। नगरके प्रतिष्ठित धनी-मानी लोग एवं राजपुरुष-तक जिसकी चाटुकारी किया करते थे, जिसके राजभवन-जैसे प्रासादकी देहलीपर चक्कर काटते रहते थे, जिसके साथ केवल क्षणभर बात करनेके लिये नौजवान अपना सर्वस्व लुटानेको प्रस्तुत हो जाया करते थे; वह नर्तकी भिक्षुको देखते ही उन्मत्तप्राय हो गयी।

इतना सौन्दर्य! ऐसा अद्भुत तेज! इतना सौम्य मुख!—नर्तकी दो क्षण तो ठिठकी देखती रह गयी और फिर जितनी शीघ्रता उससे हो सकी, उतनी शीघ्रतासे दौड़ती हुई सीढ़ियाँ उतरकर अपने द्वारपर आयी।

‘भन्ते!’ नर्तकीने भिक्षुको पुकारा।

‘भद्रे!’ भिक्षु आकर मस्तक झुकाये उसके सम्मुख खड़ा हो गया और उसने अपना भिक्षापात्र आगे बढ़ा दिया।

‘आप ऊपर पधारें!’ नर्तकीका मुख लज्जासे लाल हो उठा था; किंतु वह अपनी बात कह गयी—‘यह मेरा भवन, मेरी सब सम्पत्ति और स्वयं मैं अब आपकी हूँ। मुझे आप स्वीकार करें।’

‘मुझे धर्म-भिक्षा चाहिये। काम-भिक्षाका समय अब नहीं रहा! भगवान् तथागत तुम्हारा कल्याण करें; मैं फिर तुम्हारे पास आऊँगा।’ भिक्षुने मस्तक ऊपर उठाकर बड़ी बेधक दृष्टिसे नर्तकीकी ओर देखा और पता नहीं क्या सोच लिया उसने।

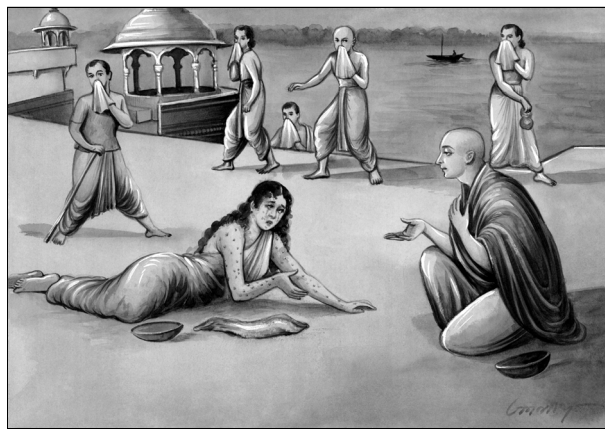
‘कब?’ नर्तकीने हर्षोत्फुल्ल होकर पूछा।

‘समय आनेपर!’ भिक्षु यह कहते हुए आगे बढ़ गया था। वह जबतक दीख पड़ा, नर्तकी द्वारपर खड़ी उसीकी ओर देखती रही।

मथुरा नगरके द्वारसे बाहर यमुनाजीके मार्गमें एक स्त्री भूमिपर पड़ी थी। उसके वस्त्र अत्यन्त मैले और फटे हुए थे। उस स्त्रीके सारे शरीरमें घाव हो रहे थे। पीव और रक्तसे भरे उन घावोंसे दुर्गन्ध आ रही थी। उधरसे निकलते समय लोग अपना मुख दूसरी ओर कर लेते थे और नाक दबा लेते थे। यह नारी थी नर्तकी वासवदत्ता! उसके दुराचारने उसे इस भयंकर रोगसे ग्रस्त कर दिया था। सम्पत्ति नष्ट हो गयी थी। अब वह निराश्रित मार्गपर पड़ी थी।

सहसा एक भिक्षु उधरसे निकला और वह उस दुर्दशाग्रस्त नारीके समीप खड़ा हो गया। उसने पुकारा—
‘वासवदत्ता! मैं आ गया हूँ।’

‘कौन?’ उस नारीने बड़े कष्टसे भिक्षुकी ओर देखनेका प्रयत्न किया।



‘भिक्षु उपगुप्त!’ भिक्षु बैठ गया वहीं मार्गमें और उसने उस नारीके घाव धोने प्रारम्भ कर दिये।

‘तुम अब आये? अब मेरे पास क्या धरा है। मेरा यौवन, सौन्दर्य, धन आदि सभी कुछ तो नष्ट हो गया।’ नर्तकीके नेत्रोंसे अश्रुधार चल पड़ी।

‘मेरे आनेका समय तो अभी हुआ है।’ भिक्षुने उसे धर्मका शान्तिदायी उपदेश देना प्रारम्भ किया।

(भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और सदाचार-सम्बन्धी सचित्र मासिक पत्र)

‘कल्याण’

-के ९१वें वर्ष (वि०सं० २०७३-७४, सन् २०१७ ई०)-के दूसरे अङ्कसे बारहवें अङ्कतकके

निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची

(विशेषाङ्ककी विषय-सूची उसके आरम्भमें देखनी चाहिये, वह इसमें सम्मिलित नहीं है।)

निबन्ध-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- अनन्य प्रेम और परम श्रद्धा (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	सं०६-पृ०७	२३- कृपानुभूति सं०२-पृ०४६, सं०३-पृ०४६, सं०४-पृ०४६, सं०५-पृ०४६, सं०६-पृ०४६, सं०७-पृ०४६, सं०८-पृ०४६, सं०९-पृ०४६, सं०१०-पृ०४६, सं०११-पृ०४६, सं०१२-पृ०४६	
२- अनन्य शरणागति (श्रीराजेन्द्रप्रसादजी द्विवेदी)	सं०१२-पृ०२४	२४- क्या ईश्वर-साक्षात्कार भी एक वैज्ञानिक सत्य नहीं ? (पं० श्रीधर्मदेवजी शास्त्री, दर्शनकेसरी, पंचतीर्थ). सं०१२-पृ०११	
३- अमरूद का पेड़ [कहानी] (श्रीहरिप्रकाशजी राठी)	सं०४-पृ०३२	२५- गंगाघाट [प्रेरक-कथा] (डॉ० श्रीमती राधिकाजी लढ़ा)	सं०४-पृ०२५
४- अमृत-कण (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	सं०१०-पृ००९	२६- गायकी प्रत्यक्ष विशेषता (पं० श्रीगंगाधरजी पाठक ‘मैथिल’)	सं०४-पृ०४१
५- अमृत-वचन [संत-वाणी] [प्रेषक—डॉ० श्रीओमप्रकाशजी वर्मा]	सं०६-पृ०३८	२७- गायके दूध, घी, मक्खन, दही, मट्ठेकी महिमा अपार [संकलनकर्ता—श्रीप्रशान्तजी अग्रवाल]	सं०८-४१
६- अर्थ और रहस्यका भेद (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	सं०१२-पृ०७	२८- गोभक्त रामसिंह (मुखिया श्रीविद्यासागरजी)	सं०५-पृ०४१
७- ‘आचारः परमो धर्मः’	सं०६-पृ०४९	२९- गोमाताकी संवेदनशीलता	सं०६-पृ०३९
८- आत्मसम्मानके आगे कुछ भी नहीं [महारानी पद्मिनीकी शौर्यकथा] (श्रीसौजन्यजी गोयल)	सं०३-पृ०२५	३०- गोविन्द (श्रीरामस्वरूपदासजी पाण्डेय)	सं०१०-पृ०३६
९- आध्यात्मिक जीवनकी सफलताका उपाय (ब्रह्मलीन परमहंस स्वामी श्रीदयानन्द ‘गिरि’ जी महाराज) [प्रेषक—प्रो० श्रीज्ञानचन्दजी गर्ग]	सं०७-पृ०१५	३१- गो-सेवासे सन्तान-प्राप्ति	सं०११-पृ०४०
१०- आध्यात्मिक धनकी श्रेष्ठता (पं० श्रीजयकान्तजी झा)	सं०९-पृ०११	३२- गोस्वामीजीका काशीप्रवास (डॉ० श्रीगौरीशंकरजी गुप्त)	सं०७-पृ०२२
११- आरोग्य-सूत्र	सं०९-पृ०३३	३३- घुने हुए बीजोंकी कहानी (श्रीरामनाथजी ‘सुमन’) ..	सं०५-पृ०१६
१२- आस्था-श्रद्धा-विश्वास (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) [प्रस्तुति—साधन-सूत्र : श्रीहरिमोहनजी]	सं०४-पृ०३९	३४- चार पुरुषार्थ (डॉ० श्रीकृष्णजी द० देशमुख) [अनुवाद—श्रीमिलिन्दजी काले] [प्रेषिका—श्रीमती मुक्ता वाल्वेकर]	सं०२-पृ०३४, सं०३-पृ०२७
१३- ईश्वर-प्राप्तिके लिये गृहत्याग आवश्यक नहीं (महात्मा तैलंग स्वामी)	सं०४-पृ०२८	३५- जगत्का स्वरूप (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०११-पृ०१३
१४- ईश्वरमें विश्वास (श्रीलक्ष्मणस्वरूपजी माहेश्वरी, एम०ए०, एल०एल०बी०)	सं०१०-पृ०२९	३६- जीवदयाका सुपरिणाम [प्रेरक कथा] (डॉ० श्री ओ०पी० गुप्ता)	सं०६-पृ०२४
१५- एक प्रसिद्ध महात्माके उद्गार	सं०१०-पृ०८	३७- जीवन कैसे जिया जाय ? (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणा-नन्दजी महाराज) [साधन-सूत्र—श्रीहरिमोहनजी]	सं०७-१६
१६- कर्मयोगका शाश्वत रहस्य (डॉ० सुश्री नीलमजी) .	सं०४-पृ०२७	३८- जीवन-दर्शन	सं०५-पृ०१८
१७- कल्याण— ... सं०२-पृ०५, सं०३-पृ०५, सं०४-पृ०५, सं०५-पृ०५, सं०६-पृ०५, सं०७-पृ०५, सं०८-पृ०५, सं०९-पृ०५, सं०१०-पृ०५, सं०११-पृ०५, सं०१२-पृ०५		३९- जीवनमें अशान्ति क्यों ? (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)[प्रस्तुति—साधन-सूत्र : श्रीहरिमोहनजी] ...	सं०६-३६
१८- कल्याणका आगामी ९२वें वर्ष (सन् २०१८ ई०)-का विशेषाङ्क ‘श्रीशिवमहापुराणाङ्क’ (उत्तरार्ध)	सं०७-पृ०५०	४०- जीवोपयोगी बातें [संतवाणी] [प्रस्तुति—डॉ० श्रीओमप्रकाशजी वर्मा]	सं०२-पृ०४२
१९- काकभुशुण्डिपर कृपा [आवरणचित्र-परिचय]	सं०४-पृ०६	४१- ‘ढाई आखर प्रेमका’ (श्रीमती आशाजी गुप्ता)	सं०१०-पृ०२५
२०- कालिय-उद्धार [आवरणचित्र-परिचय]	सं०३-पृ०६	४२- तक्र-माहात्म्य	सं०८-पृ०४२
२१- काशीके कुछ शिवलिंग (श्रद्धेय पं० श्रीलालबिहारीजी मिश्र)	सं०२-पृ०२२	४३- तनावरहित जीवन जीनेकी कला (संत श्रीहरिजी महाराज)	सं०१०-पृ०३५
२२- काशीमें गंगालाभसे मुक्ति (श्रीसत्यजी ठाकुर)	सं०२-पृ०२६	४४- तीर्थयात्रा [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी ‘चक्र’)	सं०२-पृ०३२
		४५- त्यागका स्वरूप और साधन (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०४-पृ०१२

विषय	पृष्ठ-संख्या
४६- दीर्घायुष्य एवं मोक्षके हेतुभूत भगवान् शंकरकी आराधना	सं०४-पृ०२४
४७- दीवाली (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०१०-पृ०१४
४८- दुःखनाशके अमोघ उपाय (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०७-१२
४९- दुःख है क्या ? (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) [प्रस्तुति—साधन-सूत्र : श्रीहरिमोहनजी]	सं०५-पृ०४०
५०- दुर्व्यवहारसे दुर्गति	सं०४-पृ०११
५१- द्वादश ज्योतिर्लिंगोंके अर्चा-विग्रह [ज्योतिर्लिंग-परिचय]-सं०२-पृ०३०, सं०३-पृ०३२, सं०४-पृ०३१, सं०५-पृ०३५, सं०६-पृ०२६, सं०७-पृ०२७, सं०८-पृ०३५, सं०९-पृ०३४	
५२- धर्मकार्यमें प्रमाद उचित नहीं [वैदिक आख्यान] (श्रीअमरनाथजी शुक्ल)	सं०११-पृ०२०
५३- नाग महाशयकी जीव-दया	सं०६-पृ०३५
५४- नाथपरम्पराके सिद्धसंत योगिराज गम्भीरनाथ [संतचरित] (श्रीरामलालजी श्रीवास्तव)	सं०७-पृ०३२
५५- नाम-सिद्धि [बोधकथा] (श्रीमहावीरसिंहजी 'यदुवंशी')	सं०९-पृ०२९
५६- नामानुरागी संत श्रीउडियाबाबाजी	सं०८-पृ०३२
५७- 'नारायण'-नाम-स्मरणके सम्बन्धमें महामना मालवीयजीका अनुभव (श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार). सं०४-पृ०४०	
५८- निखारिये अपने व्यक्तित्वको (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी)	सं०७-पृ०२५
५९- निष्कामभावकी महत्ता (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ...	सं०८-पृ०७
६०- पगली [कहानी] (पं० श्रीकृष्णानन्दजी अग्निहोत्री) सं०८-पृ०२३	
६१- पगली माई [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र'). सं०१२-पृ०२१	
६२- पढ़ो, समझो और करो	सं०२-पृ०४७, सं०३-पृ०४७, सं०४-पृ०४७, सं०५-पृ०४७, सं०६-पृ०४५, सं०७-पृ०४६, सं०८-पृ०४७, सं०९-पृ०४७, सं०१०-पृ०४२, सं०११-पृ०४६, सं०१२-पृ०४३
६३- परदोष-दर्शन—घाटेका सौदा (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)	सं०३-पृ०१०
६४- परमात्माके साथ है हमारा नित्य सम्बन्ध (श्रीताराचन्दजी आहूजा)	सं०५-पृ०२५
६५- परमार्थ-साधनके आठ विघ्न (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०२-पृ०११
६६- परिवार-समृद्धिकरण (श्रीकरणसिंहजी चौहान)	सं०४-पृ०२९
६७- पुण्य-कार्य कलपर मत टालो [प्रेरक प्रसंग]	सं०६-पृ०२३
६८- 'पुण्य' शब्दकी अर्थव्यापकता (साहित्यवाचस्पति श्रीयुत डॉ० श्रीरंजनजी सूरिदेव, एम०ए०, पी-एच०डी०) सं०६-पृ०२२	
६९- पूजा गोमाता (श्रीरामस्वरूपदासजी पाण्डेय)	सं०३-पृ०४१
७०- 'प्रणव'की उपासना (डॉ० श्री के०डी० शर्माजी)	सं०१२-पृ०२९
७१- प्रथमपूज्य गणेशजी [आवरणचित्र-परिचय]	सं०९-पृ०६
७२- प्रभुकी पूर्वनियोजित लीला—'रामवनवास' (डा० श्रीरमेश मंगल वाजपेयीजी)	सं०७-पृ०२०
७३- प्रसन्नता (पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल, एम०ए०, बी०टी०)	सं०१२-पृ०१६
७४- प्रारब्ध और कर्मस्वातन्त्र्य (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र').सं०८-पृ०२९	
७५- प्रेमका पंथ निराला (पं० श्रीबाल्मीकिप्रसादजी मिश्र, एम०ए०, एम०एड०)	सं०८-पृ०२६

विषय	पृष्ठ-संख्या
७६- प्रेमी भक्त श्यामानन्द [सन्त-चरित] (श्रीराधाकृष्णजी)	सं०९-पृ०३७
७७- 'फागुन लाग्यो सखी जब तें...' (श्रीअर्जुनलालजी बन्सल)	सं०३-पृ०२३
७८- 'बंदउँ नाम राम रघुबर को'	सं०८-पृ०१६
७९- बाबा गम्भीरनाथजीके वचनामृत	सं०७-पृ०३८
८०- 'बिनु हरिभजन न जाहिं कलेसा' (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय) [प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता]	सं०१०-पृ०१२
८१- ब्रह्मलीन योगिराज श्रीदेवराहा बाबाजीके उपदेश [संत-वाणी] [प्रेषक—श्रीसंकटासिंहजी]	सं०५-पृ०३४
८२- भक्तको दुःख नहीं होता (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल)	सं०५-पृ०१७
८३- भक्त राजा इन्द्रद्युम्न [आवरणचित्र-परिचय]	सं०७-पृ०६
८४- भक्त रामनारायण [भक्तगाथा]	सं०-२-पृ०२७
८५- भक्ति-साधनाका लोकमंगल पक्ष (स्वामी श्रीरामराज्यमजी)	सं०३-पृ०२०
८६- भगवती महाकाली [आवरणचित्र-परिचय]	सं०११-पृ०६
८७- भगवदश्रयसे लोक-परलोकका कल्याण (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ...	सं०७-पृ०७
८८- भगवान्के अनन्य भक्तोंकी अभिलाषा (पं० श्रीकिशनजी महाराज 'कृष्णानन्दोपाध्याय') ..	सं०८-पृ०२८
८९- भगवान् शंकरकी गोभक्ति	सं०२-पृ०४०
९०- भगवान् श्रीहरिहर [आवरणचित्र-परिचय]	सं०-२-पृ०६
९१- भजनमें एक बड़ी बाधा (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०३-पृ०१३
९२- भरतका देवपूजन (श्रीब्रह्मेश भटनागर एम० ए०) . सं०११-पृ०११	
९३- भला पड़ोसी कौन ?—एक शोध (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)	सं०५-पृ०१०
९४- भारतमें गायका महत्त्व (श्रीरामलालजी गुप्त)	सं०७-पृ०३९
९५- भोग—भोग्य या भोक्ता (श्रीरामदेवसिंहजी शर्मा) सं०११-पृ०२८	
९६- मंगलमयी [कहानी] (श्रीरामनाथजी 'सुमन')	सं०९-पृ०२२
९७- मंगलमयी गोमाताकी सेवा परम कल्याणकारी है (गोलोक-वासी जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठधीश्वर श्रीराधा सर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री 'श्रीजी' महाराज)	सं०१२-पृ०३७
९८- मन्दिरका मान [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र')सं०३-पृ०३६	
९९- मकरी अप्सराका उद्धार [आवरणचित्र-परिचय]	सं०५-पृ०६
१००- 'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः' (विद्यावाचस्पति डॉ० श्रीदिनेशचन्द्रजी उपाध्याय)	सं०९-पृ०२६
१०१- मनन करने योग्य	सं०२-पृ०५०, सं०३-पृ०५०, सं०४-पृ०५०, सं०५-पृ०५०, सं०६-पृ०४८, सं०७-पृ०४९, सं०८-पृ०५०, सं०९-पृ०५०, सं०१०-पृ०४५, सं०११-पृ०४९, सं०१२-पृ०४६
१०२- मनुष्य जन्मकी सार्थकता (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)[प्रस्तुति—साधन-सूत्र: श्रीहरिमोहनजी] सं०२-पृ०३८	
१०३- मनुष्य स्वयं ही रोग और मृत्युका मूल कारण (डॉ० श्री जी० डी० बारचे)	सं०९-पृ०३०
१०४- महर्षि वसिष्ठ—इक्ष्वाकुवंशके कुलगुरु [रामकथा] (श्रीसुदर्शन सिंहजी 'चक्र')	सं०६-पृ०२९
१०५- महर्षि वसिष्ठजीको नमस्कार	सं०६-पृ०३२
१०६- महान् वैज्ञानिककी विनम्रता	सं०३-पृ०१६
१०७- महाभारतोक शतरुद्रियस्तोत्र	सं०५-पृ०२१

विषय	पृष्ठ-संख्या
१०८- मान-बड़ई—मीठा विष ? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०९-पृ०१३
१०९- मानवकी मौंग (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) .	सं०३-पृ०१२
११०- मानवीय मूल्योंकी शिक्षा (श्रीशंकरलालजी माहेश्वरी)	सं०११-पृ०२६
१११- मानसमें वर्णित उत्कृष्ट श्रीराम-प्रेमी (श्रीसुभाषचन्द्रजी बग्गा)	सं०११-पृ०३०, सं०१२-पृ०३३
११२- मामा प्रयागदासजी [संत-चरित]	सं०५-पृ०३७
११३- मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई (श्रीइन्दरचन्दजी तिवारी)	सं०१२-पृ०१८
११४- मोह-महिमा (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)	सं०६-पृ०११
११५- मौन-व्याख्यान (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०५-पृ०१४
११६- मृत्यु क्या है ? (श्रीरणवीरजी शास्त्री) [प्रेषक—श्रीनीरजकुमारजी वैश्य]	सं०५-पृ०३२
११७- योगावतार लाहिडी महाशय [संत-चरित] (आचार्य श्रीप्रतापादित्यजी एम०ए०, एल-एल०बी०)	सं०४-पृ०३५
११८- रघुकुलपर कामधेनुनिन्दीकी अनुकम्पा (श्रीजगदीशप्रसादजी गुप्त)	सं०९-पृ०४१
११९- राजा चक्रवर्णेके त्यागका प्रभाव (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) .	सं०११-पृ०७
१२०- रामकथाके अमरत्वका रहस्य (श्रीसुरेशचन्द्रजी)	सं०११-पृ०२४
१२१- 'रास रच्यौ बन कुँवर-किसोरी' (डॉ० श्रीमती नीरूजी रस्तोगी)	सं०१२-पृ०२७
१२२- लक्ष्मीजीकी स्थिरताके उपाय (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय) [प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता]	सं०४-पृ०१६
१२३- वाल्मीकिरामायण, सुन्दरकाण्डके सकाम पाठकी विधि	सं०४-पृ०१५
१२४- विजय निश्चित है (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०१२-पृ०१३
१२५- वृन्दाका हृदय ही वृन्दावन (ब्रह्मलीन सन्त स्वामी श्रीगंगानन्दजी भारती) [प्रेषक—श्रीअनिलजी सक्सेना]	सं०४-पृ०१०
१२६- 'वृन्दावन वास पाइबे कौ बुलउआ' (डॉ० श्रीराजेशजी शर्मा)	सं०११-पृ०२१
१२७- व्रतोत्सव-पर्व— [चैत्रमासके व्रतपर्व]	सं०२-पृ०४५,
[वैशाखमासके व्रतपर्व]	सं०३-पृ०४५,
[ज्येष्ठमासके व्रतपर्व]	सं०४-पृ०४५,
[आषाढमासके व्रतपर्व]	सं०५-पृ०४५,
[श्रावणमासके व्रत-पर्व]	सं०७-पृ०४४,
[भाद्रपदमासके व्रतपर्व]	सं०८-पृ०४३,
[आश्विनमासके व्रत-पर्व]	सं०९-पृ०४३,
[कार्तिकमासके व्रत-पर्व]	सं०१०-पृ०४०,
[मार्गशीर्षमासके व्रतपर्व]	सं०११-पृ०४३,
[पौषमासके व्रतपर्व]	सं०११-पृ०४४
[माघमासके व्रतपर्व]	सं०१२-पृ०४०
[फाल्गुनमासके व्रतपर्व]	सं०१२-पृ०४१
१२८- शरीरका रक्षातन्त्र (श्रीगणेशदत्तजी दूबे) [प्रेषक—डॉ० श्रीकेशरीनारायणजी त्रिपाठी]	सं०२-पृ०१०

विषय	पृष्ठ-संख्या
१२९- शहजादी जेबुनिसापर सरस्वतीदेवीकी कृपा [ऐतिहासिक कहानी] (श्रीअशोककुमारजी चटर्जी)	सं०३-पृ०३१
१३०- शाश्वत साधन-सुधा [संत-वाणी] [प्रस्तुति—आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा]	सं०४-पृ०४४
१३१- शिव और सती (श्रीजयरामदासजी 'दीन' रामायणी) .	सं०२-पृ०१५
१३२- शिव-तत्त्व (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) .	सं०२-पृ०७, सं०३-पृ०७, सं०४-पृ०७, सं०५-पृ०७
१३३- शिवयोगी संत तिरुमूलर [संत-चरित] (श्रीरामलालजी)	सं०३-पृ०३३
१३४- शिवसे शिक्षा (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)	सं०२-पृ०९
१३५- श्रद्धा-सुमन	सं०४-पृ०५०
१३६- श्रद्ध-तत्त्व-प्रश्नोत्तरी (श्रीराजेशचन्द्रकुमारजी धवन)	सं०९-पृ०३६
१३७- श्रीअयोध्यापुरीमें दीपमालिकोत्सव [आवरणचित्र-परिचय]	सं०१०-पृ०६
१३८- श्रीकालभैरवाष्टकम् ३२	
१३९- श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना	सं०१०-पृ०४६
१४०- श्रीभगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना	सं०१०-पृ०४९
१४१- श्रीभैरव एवं उनकी उपासना (पं० श्रीसुरेशचन्द्रजी ठाकुर)	सं०१२-पृ०३१
१४२- श्रीमती आण्डाल (गोदाम्बा) [आवरणचित्र-परिचय] .	सं०६-पृ०६
१४३- श्रीरामकृष्ण परमहंस [संत-चरित] (स्वामी श्रीअभेदानन्दजी, पी-एच०डी०)	सं०१२-पृ०३५
१४४- श्रीशिवसूक्ति: [श्रीपूर्णचन्द्रकृत उद्भटसागर]	सं०२-पृ०२९
१४५- संगका फल (पं० श्रीबलदेवजी उपाध्याय, एम०ए०, साहित्याचार्य)	सं०८-पृ०११
१४६- संत नागा निरंकारी [संत-चरित] (श्रीरामलालजी श्रीवास्तव)	सं०११-पृ०३५
१४७- संसार-वृक्ष [आवरणचित्र-परिचय]	सं०१२-पृ०६
१४८- संस्कार-बीज (गोलोकवासी परम भागवत सन्त श्रीरामचन्द्र केशव डोंगरेजी महाराज)	सं०४-पृ०१८
१४९- संस्कृति और स्वेच्छाचार (श्रीप्रेमाचार्यजी शास्त्री, शास्त्रार्थपंचानन)	सं०११-पृ०२९
१५०- सचाईका पुरस्कार (पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल, एम०ए०, बी०टी०)	सं०११-पृ०१६
१५१- सच्चा भक्त [प्रेषक-प्रसंग] (श्रीशिवकुमारजी गोयल)	सं०१०-पृ०११
१५२- सत्यका स्वरूप (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी महाराज) [प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता]	सं०७-पृ०९
१५३- सत्संगका प्रभाव (श्रीभागवतप्रसादजी पाण्डेय)	सं०७-पृ०११
१५४- सत्संगकी महिमा	सं०३-पृ०१९
१५५- सन्त नाग महाशय [संत-चरित]	सं०६-पृ०३३
१५६- सन्तप्रवर श्रीभरतजी—श्रीहनुमान्जीकी दृष्टिमें (श्रीजगदीशप्रसादजी गुप्त)	सं०४-पृ०२२
१५७- सन्तवाणी (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	सं०८-पृ०३४, सं०९-पृ०४०, सं०१०-पृ०३१
१५८- समयका सदुपयोग (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	सं०९-पृ०७
१५९- सर्वत्र भगवद्दर्शन और व्यवहार (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०६-पृ०१३
१६०- समर्थ गुरु रामदास स्वामी [संत-चरित]	सं०१०-पृ०३२

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१६१-समुद्र-गर्जन (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल)	सं०३-पृ०१५	[बोधकथा]	सं०११-पृ०५०
१६२-सर्वश्रेष्ठ शासक [प्रेरक प्रसंग]	सं०६-पृ०२५	१७१-सारथि (श्रीराजेन्द्रप्रसादजी जैन)	सं०१०-पृ०२६
१६३-सर्वार्थसाधक भगवन्नाम (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार)	सं०८-पृ०१५	१७२-सावधान रहनेकी आवश्यकता	सं०१०-पृ०७
१६४-सहनशक्ति बढ़ाइये (श्रीअगरचन्दजी नाहटा)	सं०१०-पृ०१६	१७३-सिन्धुके कृष्णभक्त हिन्दी कवि (प्राचार्य डॉ० श्रीदयालजी 'आशा')	सं०८-पृ०३७
१६५-साक्षात् मन्मथमन्मथ श्रीकृष्णका वेणुवादन [आवरणचित्र-परिचय]	सं०८-पृ०६	१७४-'सीता सहित अनुज प्रभु आवत' (श्रीअर्जुनलालजी बंसल)	सं०१०-पृ०२२
१६६-साधकोंके प्रति—(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	सं०२-पृ०१९, सं०३-पृ०१७, सं०४-पृ०१७, सं०५-पृ०१९, सं०६-पृ०२०, सं०७-पृ०१७, सं०८-पृ०२०, सं०९- पृ०१८, सं०१०-पृ०१९, सं०११-पृ०१८, सं०१२-पृ०१९	१७५-सीता-स्वयंवर [राम-कथा] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र')	सं०५-पृ०२८
१६७-'साधन धाम मोच्छ कर द्वारा'	(डॉ० श्रीत्रिलोकीनाथ सिंहजी, एम०ए०, पी-एच०डी०, डी०लिट०)	१७६-सुन्दरकाण्ड 'सुन्दर' क्यों? (डॉ० श्रीकैलाशप्रसादसिंहजी, एम०ए०, पी-एच०डी०)	सं०४-पृ०१९
१६८-साधन-सूत्र (आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा)	सं०१०-पृ०३०	१७७-स्मरण तथा चिन्तन योग्य विचार [संतवाणी] [प्रस्तुति—श्रीहृदयनाथजी चतुर्वेदी]	सं०३-पृ०९
१६९-साधनोपयोगी पत्र ... सं०२-पृ०४३, सं०३-पृ०४३, सं०४-पृ०४२, सं०५-पृ०४३, सं०६-पृ०४१, सं०७-पृ०४२, सं०८-पृ०४४, सं०९-पृ०४४, सं०१०-पृ०३८, सं०११-पृ०४१, सं०१२-पृ०३८		१७८-स्मृति ही है अन्तिम समयकी साधना (डॉ० श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति)	सं०७-पृ०२८
१७०-साधुके लिये स्त्री-दर्शन ही सबसे बड़ा पाप		१७९-हनुमान्जीके द्वादशनाम और उनके पाठका माहात्म्य ...	सं०७-पृ०२४
		१८०-हममें परिवर्तन क्यों नहीं होता? (श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)	सं०८-पृ०१७, सं०९-पृ०१५

संकलित-सामग्री

१-'को जाँचिये संभु तजि आन'	सं०५-पृ०२४	९-महिषासुरमर्दिनी कमलासना भगवती महालक्ष्मीका ध्यान	सं०११-पृ०३
२-चरन-कमल बंदौं हरि-राइ	सं०१२-पृ०४२	१०-'माधुरी मुरली अधर धरे'	सं०५-पृ०३
३-जयति निकुंजबिहारिनी	सं०८-पृ०३	११-श्रीद्वारकानाथकी वन्दना!	सं०१२-पृ०३
४-'जय दुर्गे दुर्गतिनाशिनि जय'	सं०१०-पृ०३	१२-श्रीमधुसूदन सरस्वतीकी श्रीकृष्णभक्ति	सं०६-पृ०३
५-'झुलावति स्यामा स्याम-कुमार'	सं०७-पृ०३	१३-श्रीमृत्युञ्जयशिव-ध्यान	सं०२-पृ०३
६-'दूलह राम, सीय दुलही री!' [गीतावली]	सं०११-पृ०१२	१४-श्रीराम-लक्ष्मणद्वारा विश्वमित्रके यज्ञकी रक्षा	सं०३-पृ०३
७-देवी दुर्गाका ध्यान	सं०४-पृ०३		
८-'दै री मैया दोहनी, दुहिहौं मैं गैया'	सं०९-पृ०३		

पद्य-सूची

१-अर्चन (श्रीमती डॉ० उर्मिला किशोरजी)	सं०५-पृ०३९	१०-तीन प्रहरका यह जीवन [कविता] (श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव)	सं०११-पृ०१५
२-कोटि-कोटि नाम तेरे (श्रीमती डॉ० उर्मिलाजी किशोर)	सं०७-पृ०२६	११-नटराज शंकर (श्रीपृथ्वीसिंहजी चौहान 'प्रेमी')	सं०२-पृ०२१
३-गजानन-स्तुति (डॉ० श्रीसात्यप्रकाशजी 'बृजेश किंकर')	सं०२-पृ०१४	१२-नारी! (श्रीगयाप्रसादजी द्विवेदी 'प्रसाद')	सं०९-पृ०२५
४-गजेन्द्रकृत श्रीहरि-स्तुति (श्रीरामेश्वरजी पाटीदार) [प्रेषक—श्रीअशोकजी चौरे]	सं०८-पृ०४०	१३-पथिक रे! (श्रीमावलीप्रसादजी श्रीवास्तव)	सं०६-पृ०१९
५-'गोमाता है विश्व की माता' (पं० श्रीकृष्णजी शर्मा)	सं०३-पृ०४२	१४-'विश्वनाथ! तेरी जय हो!' (श्रीयुत डॉ० श्रीरंजन सूरिदेवजी, एम० ए०, पी-एच० डी०)	सं०३-पृ०४०
६-गोवध बंद हो (डॉ० श्रीगणेशदत्तजी सारस्वत)	सं०७-पृ०४१	१५-'राम राम जपिये' (श्रीओमप्रकाशजी अग्निहोत्री 'सुबोध')	सं०५-पृ०३१
७-चेतावनी (पूज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज) [प्रेषक—श्रीकुँवरसिंहजी]	सं०२-पृ०३९	१६-शिवरूप-माधुरी—(श्रीशरदजी अग्रवाल, एम०ए०)	सं०२-पृ०१८
८-जग-जीव सभी रामाश्रित हैं (श्रीसुरेशजी शुक्ल 'मृदुल')	सं०५-पृ०२७	१७-शिवसे विनय (श्रीचन्द्रशेखरजी शुक्ल) [प्रेषक—श्रीरविन्द्रजी अग्रवाल]	सं०५-पृ०२०
९-'ज्योति बुझने न पाये' (श्रीमती इन्द्रमती पाण्डेय)	सं०११-पृ०१५	१८-श्रीजानकी-स्तुति (पंचरसाचार्य श्रद्धेय स्वामी श्रीरामहर्षणदासजी महाराज) [प्रेषक—पं० श्रीरामायणप्रसादजी गौतम]	सं०४-पृ०३४
		१९-'हरि भज बन्दे आठों याम' (श्रीगोपालजी भारतीय)	सं०१०-पृ०१८
		२०-'बोरी खेतन हैं गिरधारी' (भक्तिमती सीमबाई)	सं०३-पृ०२४

गीताप्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित—भगवान्‌के विभिन्न स्वरूपोंके महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹
भगवान् श्रीगणपति			भगवान् श्रीराम					
657	श्रीगणेश-अङ्क	१७०	819	श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् (शांकरभाष्य)	३०	574	योगवासिष्ठ	१८०
2024	श्रीगणेशस्तोत्ररत्नाकर	४०	1801	” (हिन्दी-अनुवादसहित)	१०	103	मानस-रहस्य, सजिल्द	६०
भगवान् शिव			225	गजेन्द्रमोक्ष	४	231	रामरक्षास्तोत्र	४
1468	सं० शिवपुराण (विशिष्ट सं०)	२५०	229	श्रीनारायणकवच	४	श्रीहनुमान्‌जी		
	(अच्छी क्वालिटीके मोटे कागजपर)		1367	श्रीसत्यनारायण-व्रतकथा	१५	42	हनुमान-अङ्क—परिशिष्टसहित	१५०
789	सं० शिवपुराण	२००	भगवान् श्रीकृष्ण			185	भक्तराज हनुमान्	१०
1985	लिंगमहापुराण-सटीक	२२०	571	श्रीकृष्णलीला-चिन्तन	१५०	112	हनुमान-बाहुक	५
2020	शिवमहापुराणमूलमात्रम्	२७५	517	गर्ग-संहिता	१५०	महाशक्ति भगवती		
1417	शिवस्तोत्ररत्नाकर	३५	1927	जीवन-संजीवनी	४५	1897	श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण-सटीक	४००
1627	रुद्राष्टाध्यायी (सानुवाद)	३०	555	श्रीकृष्णमाधुरी	३५	1898	दो खण्डोंमें सेट	
1954	शिव-स्मरण	१०	62	श्रीकृष्णबालमाधुरी	३५	1133	सं० देवीभागवत	२६५
563	शिवमहिम्नःस्तोत्र	५	547	विरह-पदावली	३०	41	शक्ति-अङ्क	२००
228	शिवचालीसा (लघु आकारमें भी)	४	864	अनुराग-पदावली	४०	1774	श्रीदेवीस्तोत्ररत्नाकर	४०
230	अमोघ शिवकवच	४	49	श्रीराधा-माधव-चिन्तन	९०	2003	शक्तिपीठदर्शन	२०
भगवान् विष्णु			50	पद-रत्नाकर	११०	भगवान् सूर्य		
48	श्रीविष्णुपुराण (सटीक)	१५०	1862	श्रीगोपालसहस्रनामस्तोत्र		791	सूर्याङ्क	१३०
1364	” (केवल हिन्दी)	१००		(हिन्दी-अनुवाद)	१७	211	आदित्यहृदयस्तोत्र	४
			1748	संतानगोपालस्तोत्र	८			

माघ-मेला प्रयाग (सन् २०१८)

श्रद्धालुओंको चाहिये कि पौष शुक्ल पूर्णिमा (२ जनवरी, २०१८ ई०)-से माघ शुक्ल पूर्णिमा (३१ जनवरी, २०१८ ई०)-तक पूरे एक मासतक कल्पवासी बनकर प्रयागमें रहें और श्रद्धा-भक्तिपूर्वक नित्यप्रति पुण्यतोया त्रिवेणीमें स्नान-लाभ करते हुए धर्मानुष्ठान, सत्सङ्ग तथा दान-पुण्य करें—

स्नानकी प्रमुख तिथियाँ

१-पौष शुक्ल १५,	मंगलवार	(२ जनवरी, २०१८ ई०)	माघस्नानारम्भ।
२-माघ कृष्ण १४,	सोमवार	(१५ जनवरी, २०१८ ई०)	मकर-संक्रान्ति।
३-माघ कृष्ण ३०,	मंगलवार	(१६ जनवरी, २०१८ ई०)	मौनी अमावस्या।
४-माघ शुक्ल ५,	सोमवार	(२२ जनवरी, २०१८ ई०)	वसन्तपंचमी।
५-माघ शुक्ल १५,	बुधवार	(३१ जनवरी, २०१८ ई०)	माघी पूर्णिमा।

माघ-मेला प्रयाग क्षेत्रमें विशेष पुस्तक-स्टॉल लगानेका विचार है।

गीता-दैनन्दिनी (सन् २०१८) अब उपलब्ध—मँगवानेमें शीघ्रता करें।

पूर्वकी भाँति सभी संस्करणोंमें सुन्दर बाइंडिंग तथा सम्पूर्ण गीताका मूल-पाठ, बहुरंगे उपासनायोग्य चित्र, प्रार्थना, कल्याणकारी लेख, वर्षभरके व्रत-त्योहार, विवाह-मुहूर्त, तिथि, वार, संक्षिप्त पञ्चाङ्ग, रूलदार पृष्ठ आदि।

पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण (कोड 1431)—दैनिक पाठके लिये गीता-मूल, हिन्दी-अनुवाद, मूल्य ₹ ७५
बंगला (कोड 1489), ओड़िआ (कोड 1644), तेलुगु (कोड 1714) प्रत्येकका मूल्य ₹ ७५

पुस्तकाकार—सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 503)—गीताके मूल श्लोक एवं सूक्तियाँ मूल्य ₹ ६०

पॉकेट साइज—सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 506)—गीता-मूल श्लोक, मूल्य ₹ ३५

लघु आकार—सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 1769)—विशेष प्रकारके पतले पेपरपर मूल्य ₹ २०



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!

जनवरी २०१८ (कल्याण वर्ष ९२)-का विशेषाङ्क—**‘श्रीशिवमहापुराणाङ्क’ (उत्तरार्ध), [हिन्दीभाषानुवाद—श्लोकाङ्कसहित]**

महापुराण संख्यामें अठारह हैं। इनमें शिवपुराणका विशेष माहात्म्य है। पिछले वर्ष कल्याणके विशेषाङ्कके रूपमें श्रीशिवमहापुराणका पूर्वार्ध प्रकाशित किया गया था जिसकी पाठक महानुभावोंने बहुत प्रशंसा की। इस वर्ष प्रकाशित होनेवाले उत्तरार्धमें मानवजीवनके परम कल्याणकी अनेक उपयोगी बातें निरूपित हैं। शिवज्ञान, शैवीदीक्षा तथा शैवागमका यह अत्यन्त प्रौढ़ ग्रन्थ है। साधना एवं उपासना-सम्बन्धी अनेकानेक सरल विधियाँ इसमें उल्लिखित हैं। इसकी कथाएँ अत्यन्त मनोरम, रोचक तथा बड़े ही कामकी हैं। मुख्यरूपसे इस अंकमें भगवान् शिवके लीलावतारोंकी कथाएँ, द्वादश ज्योतिर्लिंगों-उपलिङ्गोंके आख्यान, शिवरात्रि, पाशुपत आदि व्रतोंकी कथाएँ, शिवभक्तोंके रोचक आख्यान, अर्धनारीश्वरस्तोत्र एवं पञ्चाक्षर मंत्र आदिका माहात्म्य विस्तारसे वर्णित है। यह उच्चकोटिके सिद्धों, आत्मकल्याणकामी साधकों तथा साधारण आस्तिकजनों—सभीके लिये परम मंगलमय एवं हितकारी है।

वार्षिक शुल्क सजिल्द ₹२५०, पञ्चवर्षीय शुल्क सजिल्द ₹१२५०

अब ‘कल्याण’ के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

नवीन प्रकाशन—छपकर तैयार

प्रेमके वशमें भगवान् (कोड 2117)—प्रस्तुत पुस्तकमें श्रीजयदयालजी गोयन्दकाद्वारा लगभग ७०-७५ वर्ष पूर्व दिये गये प्रवचन तथा उनके अंतरंग सत्संगियोंसे हुए पत्राचारको संकलित किया गया है। इसमें साधारण-से-साधारण व्यक्तिके लिये साधनमें लानेयोग्य बहुत-से साधन बतलाये गये हैं जिनसे पापी-से-पापी व्यक्ति भी अपना कल्याण कर सकते हैं। मूल्य ₹१५

सरल गीता (कोड 2099)—गीताजीका सही उच्चारण सीखनेवाले पाठकोंको ध्यानमें रखकर उक्त गीताका प्रकाशन किया गया है। इसमें प्रत्येक चरणके कठिन शब्दोंको सामासिक चिह्नोंसे अलग करके दो रंगोंमें छापा गया है। इससे श्लोकोंके उच्चारणमें सहायता मिल सकती है। मूल्य ₹३५

कोड	पुस्तक-नाम	नेपाली मूल्य रु.	मूल्य ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹
2094	गीता-माधुर्य (नेपाली)	२५	१५	2091	सावित्री और सत्यवान् (बँगला)	५
2095	प्रश्नोत्तरमणिमाला (”)	३०	१८	2092	नल-दमयन्ती (बँगला)	६
2096	उपनिषद्का चौध रत्न (”)	१६	१०	2093	गीता पढ़नेके लाभ (बँगला)	४
2097	विदुरनीति (”)	३२	२०	2087	सुख-शान्तिपूर्वक जीनेकी कला (बँगला)	१०
2090	भूले न भुलाये (ओड़िआ)	—	२२	2089	संक्षिप्त श्रीमार्कण्डेयपुराण (तेलुगु)	१००
2106	श्रीदुर्गासप्तशती (मलयालम)	—	४५			

पुनः छपकर तैयार—माघमास-माहात्म्य (कोड 1588)—इन महीनोंमें भगवान्की प्रीतिके उद्देश्यसे किये जानेवाले पुण्यकर्म अक्षय हो जाते हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें पद्मपुराणमें वर्णित माघमासके माहात्म्यका संकलन किया गया है। मूल्य ₹१०